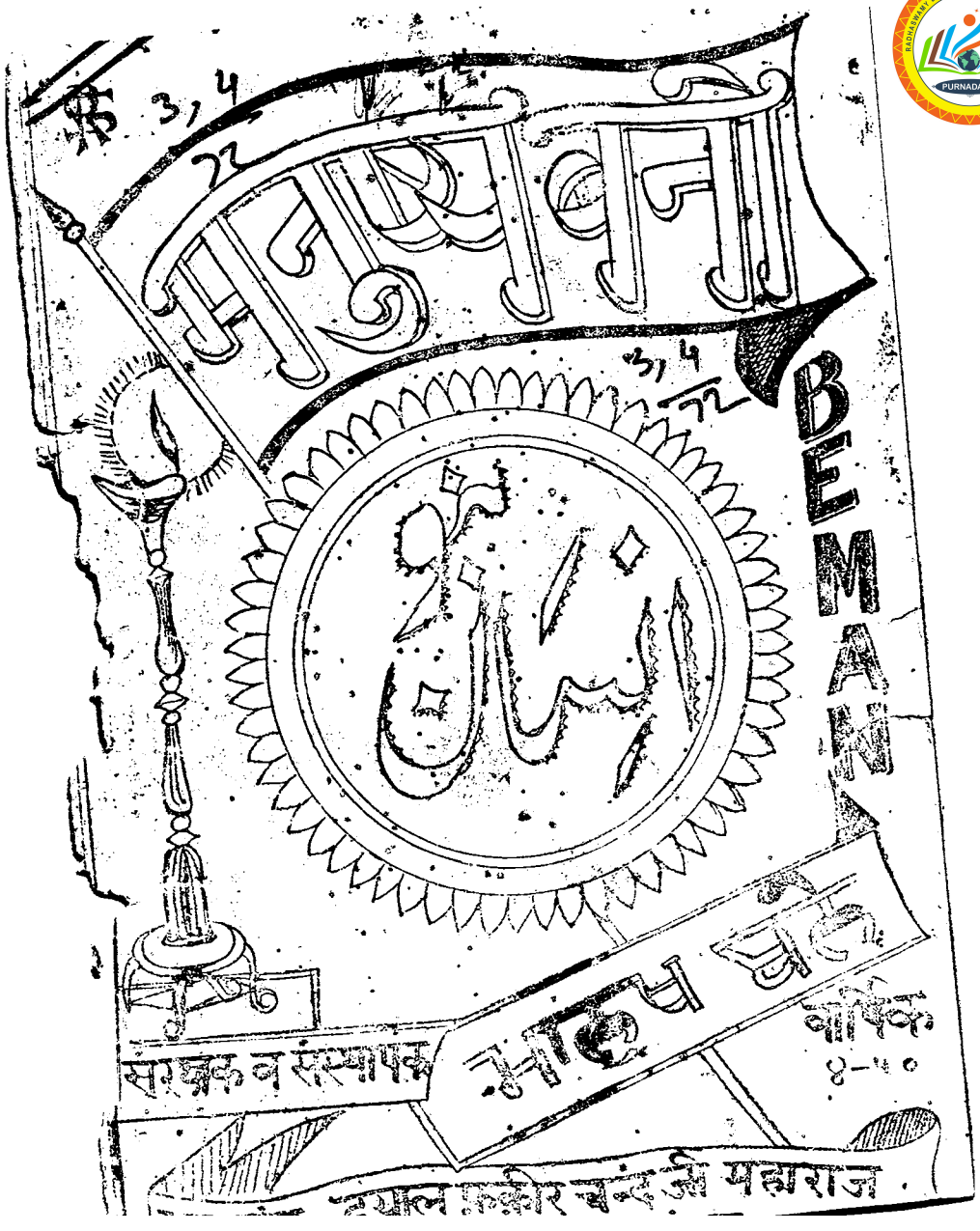

3, 4
3, 4
72
BEMAN
सम्पादक
वार्षिक
४-५०
महाराज

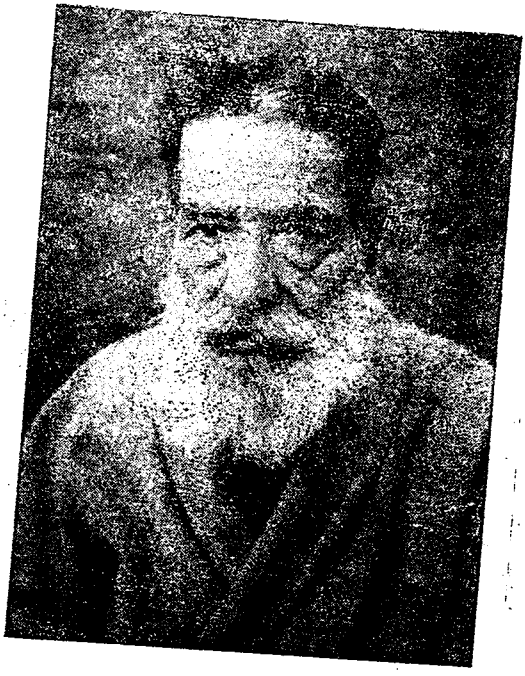

परम पुरुष पूरन धनी परम दयाल फकीर साहब जी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर

राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय
राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय

R.S.

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदः पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ।।

❋ मनुष्य बनो ❋

वर्ष २०	चैत्र, वैसाख सं० २०२८ वि० मार्च, अप्रैल सन् १९७२	सं०६ व ७/२३३,२३४

❋ सुमिरन ❋

जब तुम्हें चिन्ता सतावे, गुरु का तुमको ध्यान हो ।
मिट रहे अज्ञान पल छिन में, जो सच्चा ज्ञान हो ।।
दुख में संकट में विपत में, सोच में चिन्ता में भी ।
नाम का सुमिरन सदा हो, नाम का अनुमान हो ।।
सोते उठते बैठते और, खाते पीते जागते ।
गुरु को अपने पास समझो, परिचय का परमान हो ।।
कौन सी आपत है जो, टाले नहीं टलती कभी ।
नाम है हथियार जानो, तुम नहीं अनजान हो ।।
राधास्वामी की दया से, जब शरण तुमको मिली ।
कुछ दिनों अभ्यास पीछे जीते जी निरवान हो ।।

मानवता

यह दो महिने अर्थात् मार्च और अप्रैल का एक अंक है। इससे हम पिछली कमी को पूरा कर रहे हैं। अब ७ महीने हो चुके मगर हमारे प्रेमी पाठकों के बार-बार स्मरण कराने पर भी यह ध्यान में नहीं आया कि 'मनुष्य बनो' का चन्दा भेजदें। जो वस्तु ली जाती है उसका मूल्य चुकाना पड़ता है। यह नियम है। यह छोटी-छोटी बातें हैं जिन पर हमारे प्रेमी पाठकों को हमेशा ध्यान में रखना चाहिये। जब हम अपने दैनिक व्यवहार को सुधारने का प्रयत्न नहीं करते तो मनुष्यता और ब्रह्म ज्ञान तो दूर रहा। परमदयाल जी महाराज का यही उपदेश है यही चेतावनी है कि पहिले अपने व्यवहार को ठीक करो, अपनी नीयत को शुद्ध रक्खो। इसलिये व्यवहार को सुधारिये और कृपा करके इसका चन्दा तुरन्त भेज दीजिये।

सहायता कार्य

जो प्रेमीजन 'मनुष्य बनो' का चन्दा देने में असमर्थ हों, वह कृपा करके परमदयाल जी महाराज को या हमको लिखें। हम उनको मुफ्त देने का प्रबन्ध करेंगे।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

रक्षा (सलामती)

(महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज)

(गतांक पृष्ट ८ से आगे)

ईश्वर के पुत्र बने रहो। अपने मौरूसी अधिकार को न छोड़ो और तुम आकाश के राज्य के फिर भी उत्तराधिकारी (वारिस) बने रहोगे। सर्व शक्तिमान ईश्वर में यह शक्ति नहीं है कि वह ऐसे बच्चों को उनका हक न दे। यहां मुझको एक कहानी याद आगई। एक व्यक्ति शिवजी का उपासक था। उसने बहुत पूजा की। शिवजी प्रसन्न नहीं हुये। अन्त में उसने एक दिन क्रोधित होकर कहा, जाओ आज से मैं तुम्हारी पूजा न करूँगा। और उसने उसी समय विष्णु की पूजा आरम्भ करदी। जब फूल आदि चढ़ाने लगा, शिवजी की मूर्त्ति देखकर विचार आया कि यह भी मेरे चढ़ाये हुये फूल की सुगन्ध लेता होगा। उसी समय रुई लेकर उनके दोनों नथनों में ठूंसने लगा। मूर्त्ति हँसी—"मांग मांग क्या मांगता है।" यह बोला अब तक प्रसन्न क्यों नहीं हुये थे? शिवजी ने उत्तर दिया "मैं तेरी परीक्षा कर रहा था। रुई के ठूँसने से मुझको मालूम होगया कि तू मुझको जिन्दा ईश्वर समझता है। मैं प्रसन्न होगया।"

बिना प्रेम रीझें नहीं, तुलसी नन्द किशोर।
राम राम सब कोई कहै, ठग ठाकुर और चोर ।।

यह कहानी है। सच हो झूंठ इससे प्रयोजन नहीं मगर इसमें असलियत है।

क्या तुम भी ईश्वर को जिन्दा व्यक्ति समझते हो? यदि यह बात है तो तुम ईश्वर से लड़ते हुये भी उसके परम भक्त हो। कृष्ण बड़े उत्पाती थे। मटके मठारे सब फोड़ दिया करते थे। दूध, दही छाछ के बर्त्तन उलटते रहते थे। यशोदा तंग थी। कई बार ... ने बाँधा मारा और कृष्ण के हाथों से स्वयं मार खाई।

मगर जब कृष्ण रोने और मचलने लगे माता सब कसूरों को भूल गई। गोद में लेकर चूमने लगी। ऐ मेरे पाठको ! तुम भी कृष्ण की तरह यशोदा रूपी ईश्वर के सच्चे पुत्र बनने की कोशिश करो और उसकी बाल क्रीड़ा से प्रेम की शिक्षा लो। कौन कहता है तुम ज्ञानी बनो। ईश्वर की भक्ति में बड़ा रस है। भक्ति और ज्ञान में भेद नहीं है। अज्ञानी भेद मानते हैं मगर इसका सच्चा प्रेम दिल में हो। एक प्रेम की आवश्यकता है। फिर चाहे जैसा व्यवहार करते रहो।

इस बात की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है कि तुम ईश्वर को किस तरह मानते हो। उसको माता समझो, उसको बाप समझो, उसको मित्र समझो। जिस तरह हो सके उसके प्रेम को हृदय में जगह दो। जिस रूप से तुम उसको याद करोगे उसी रूप से वह तुमको दर्शन देगा। तुम उसकी अपार दया से कभी बंचित न रहोगे।

प्रेम एक बस चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावे घर में बास कर, भावे बन में जाय ॥

ईश्वर सबको मिलता है। वह सबका है। सब उसके हैं। आस्तिक, नास्तिक, धार्मिक, अधार्मिक जिसने जिस तरह उसको याद किया, वह उसी तरह उसको मिला। मैंने पुस्तकों में वह बातें नहीं पढ़ीं जो मैंने अपढ़ भक्तों की जुबानी सुनी है। मुझको पंडितों से ज्ञान के वह नुक्ते नहीं सुनने में आयें जो प्रत्यक्ष में अज्ञानी लोगों की जुबान से सुने गये हैं क्योंकि इनके दिल में ईश्वर निवास करता था।

ऐ मेरे प्रभू ! तू मुझको चाहे जिस स्थिति में रक्खे अपना प्रेम मुझको दे। मैं और कुछ नहीं चाहता।

जैसे लोभी धन चहे, जैसे कामी काम।
तैसे मेरे मन बसो, मेरे दाता राम ॥

बात क्या थी और कहाँ पहुँच गया। रक्षा की आवाज सुनाने

आया था और क्या कहने लगा। यह वाक्य प्रसंग रहित था। मगर यह मुझको बड़ा प्यारा है यही असल में रक्षा की नींव है।

जो लोग ईश्वर को इस तरह जानते बूझते और मानते हैं उनको किसी का भय नहीं होता। उनको अगम पद की प्राप्ती होती है। कमजोर से कमजोर माता की गोद में खेलने वाला लड़का किसी शक्ति शाली शत्रु का भय नहीं करता। कमजोर से कमजोर माता अपने बच्चे के बचाने के लिये शेर का मुंह पकड़ लेगी, सांप का फन मोड़ देगी। ईश्वर तो सर्व शक्तिमान माता है, वह कब अपने बालक की रक्षा से चूकता है।

ऐसा अपने मन में विश्वास रक्खो और तुमको हमेशा के लिये भय से छुटकारा हो जायगा।

जिस समय तुमको ईश्वर का ऐसा विश्वास होगया तुम जान गये कि ईश्वर में ही समस्त सुखों का भंडार है, तब इसकी प्रार्थना करो। प्रार्थना कैसी होनी चाहिये। उसकी व्याख्या भी मैं दृष्टान्त से करूंगा। बच्चा माँ के पेट में पड़ा है। उसकी नाभी की नाल माँ की नाभी से मिली हुई है। जहां भूक प्यास के समय उसने थोड़ीसी उस नली को गति दी स्वयं सूक्ष्म भोजन अन्दर ही अन्दर उसके पेट में पहुँचेगा। यह प्रार्थना है। माँगना, चाहना, इच्छा करना प्रार्थना है। मां के पेट से बाहर निकला हुआ बच्चा जब रोता है प्रार्थना ही करता है। वह रोया नहीं कि मां ने उसी समय अमृत से भरी हुई छाती उसके मुँह में लगादी और वह दूध पीने लगा। बच्चा गिर पड़ा। चोट आगई। रोने लगा। मां ने उठा कर छाती से लगा लिया और वही अमृत मय छाती जो हजारों दवा की दवा है उसके मुँह में दे दी। वह चुप होगया और दुख भूल गया। तुम भी यह कर सकते हो। विचार की सहायता से ईश्वर तक पहुँचो। तुम्हारे विचार की नली उस सच्ची माता के स्तन से अमृत लाकर मुँह में चुआ देगी और तुम तृप्त हो जाओगे।

॥ मनुष्य बनो ॥

इस अमृत के पान करने वाले न कभी बूढ़े होते हैं न मरते हैं। वह अमर हो जाते हैं मगर माँगना प्रार्थना करना, रोना शर्त है। जब तुम ईश्वर को माता समझते हो तो फिर उसके पास रोने में क्या शर्म है। रोओ और वह तुमको हँसा देगा। मांगो और तुमको देगा। बुलाओ, वह तुम्हारे पास दौड़ा चला आवेगा। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

बच्चे के लिये रोना ही आवश्यक है। उसका रोना भी बच्चों ही की तरह चाहिये।

कबीर हँसना दूर कर, रोने से कर प्रीति।
बिन रोये नहिं पाइया, प्रेम पियारा मीत॥
सुखिया सब संसार है, खावे और सोवे।
दुखिया दास कबीर है, जागे और रोवे॥
हँस हँस कन्त न पाइयां, जिन पाया तिन रोय।
हँसी हँसी जो हरि मिलें, कौन सुहागिन होय॥

इस रोने में आनन्द है जो केवल रोने वाला ही जानता है। हम दुनिया में रोते हुये आये हैं। काश! यदि हम इसी प्रकार रोते रहें तो वह माता कभी हमारा साथ न छोड़े। फकीर और साधुओं का धर्म रोने का मार्ग है, बशर्ते कि कोई रोने के रहस्य को समझले।

जो रोते हैं वही अन्त में हँसते है। जो माँगते हैं वही अन्त में पाते हैं।

ईश्वर से रक्षा माँगो और तुमको रक्षा मिलेगी। यह प्रकृति का सिद्धान्त है कि हर जिन्स अपनी जिन्स ही को खेंचता है। रक्षा के विचार को मन में स्थान दो। जब मन एकाग्र होने लगे, इसके ख्याल की धार से रक्षा के भंडार को छू दो। इसमें इसी तरह गति पैदा होगी और रक्षा तुमको मिल रहेगी, जिस तरह बच्चा माता के पेट को अपनी नाल से गति देकर भोजन प्राप्त करता है। माता के पेट का उदाहरण इस अवसर पर बहुत मौजूं मिल गया है।

हम तुम जिसमें बसते हैं वह भंडार भी माता के पेट की तरह है और उसके साथ हमारे दिल का सिलसिला वैसे ही है जैसे टैली-ग्राफ के तार एक दूसरे स्थानों से मिले जुले रहते हैं। इनमें तनिक भी अन्तर नहीं है। तुम मानो या न मानो मगर है ऐसा ही। जो इस तार को हिलाना जानते हैं वह न केवल अपनी प्रार्थना का सन्देश ही भेजते हैं, किन्तु सीधे सीधे उससे आवश्यक सामान प्राप्त करते रहते हैं।

एक तुम्हारा अपना मन है दूसरा मालिक का ब्रह्माण्डीय मन है। जैसे बच्चे का पेट मां के पेट में रहता है वैसे ही तुम्हारा मन ब्रह्माण्डी मन के अन्दर रहता है। समष्टि और वेष्टि, पिंड और ब्रह्माण्ड इसी प्रकार मिले जुले रहते हैं। केवल विचार को क्षोभ देने की आवश्यकता है इसमें अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता क्योंकि कुदरत में कहीं भी परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं। सब कुछ यों ही होता रहता है और यों ही हुआ करता है। जो लोग परिश्रम का पाठ पढ़ाते हैं वह अज्ञानी हैं। उनकी दृष्टि ऊँची नहीं है। परिश्रम बिगड़े हुये चित्त की कल्पना है और कुछ नहीं।

अजगर करे न चाकरी, पछी करे न काम।
दास मलूका कहि गये, सब के दाता राम।।
तुलसी विरवा बाग का, सींचे और कुम्हलाय।
राम भरोसे जो रहे, परबत पर लहराय।।

तुम्हारा मन यद्यपि प्रत्यक्ष में सीमित समझा जाये मगर वह सीमित नहीं है, असीमित है क्योंकि वह ब्रह्माण्डीय मन से गुथा हुआ है, जैसे बच्चे का मन माता के मन से पिरोया हुआ रहता है। ब्रह्माण्डीय मन हर वस्तु का भंडार है और यह सम्पूर्ण पदार्थ यदि तुम चाहो तो सीधे केवल अपने विचार की धार से खेंच मँगा सकते हो। कुल कारबार विचार का है। जो कुछ हो रहा है, हुआ था या ... कल्पित है। विचार ही सब कुछ कर सकता है।

ईश्वर भक्ती

योगी अपने हृदय गुहा में घुस कर वाह्य संसार को भूल जाता है उसकी समाधी लग जाती है। वह अपनी आत्मा को अर्थात जीवन शक्ती को एकत्रित करके मस्तिष्क में किसी विशेष स्थान पर ले जाता है। उसको अपने तन मन की सुधि नहीं रहती। उसको आनन्द मिलता है। खान पान की इच्छा नहीं रहती क्योंकि उसके अन्तर अमृत टपकता है। अमृत एवं आनन्द उसका भोजन है। इस प्रकार की समाधि कितने समय तक लगाई जा सकती है यह योगी की इच्छा पर निर्भर है।

एक ऐतिहासिक घटना है कि महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में एक योगी आया। उसने बताया कि वह ६ महीने तक समाधी लगा सकता है। उनके चरणों में नत मस्तक हूँ। वह ईश्वर दर्शन की ओर प्रगतिशील है। कबीर साहब ने कहा है।

अपना सा जीव सबको जाने, ताहि मिले अविनाशी।

ईश्वर दर्शन एवम् ईश्वर प्राप्ती

ईश्वर दर्शन का विषय बड़ा गहन है। इस विषय पर प्रकाश डालना कठिन ही नहीं है अपितु प्रत्येक व्यक्ति इसको लेख बद्ध करने का अधिकारी नहीं है। यह एक समस्या है। जिस महा पुरुष ने ईश्वर

दर्शन किये हैं वही इस समस्या का समाधान कर सकता है एवं वर्णन कर सकता है कि ईश्वर दर्शन कैसे हो सकते हैं। आदि सन्त सत कबीर साहब ने कहा है—

वहाँ से कोई न आइया, जासे पूछूँ जाय।
यहाँ से सब ही जात हैं, भार लदाय लदाय॥

ईश्वर दर्शन के लिए आवश्यक है कि जीव ईश्वर के अस्तित्व को मानता हो। ईश्वर भक्त हो। ईश्वर दर्शन का अधिकारी हो। अधिकार अति आवश्यक है। कहा जाता है कि अधिकार प्राप्त हो जाने पर अधिकारी को स्वयंमेव मनोवांछित मार्ग मिल जाता है।

मैंने एक बार अपने एक मित्र से प्रश्न किया। मेरा मित्र बहुत प्रेमी भक्त है—प्रातः सायं ईश्वर दर्शन के लिये निरन्तर मन्दिर जाता है, पूजा-पाठ करता है। मैंने कहा कि आप ईश्वर दर्शनों के लिए मन्दिर जाते हैं। यदि आपको मानव देह में ईश्वर मिल जांयें और आपको विश्वास हो जाय कि वह साक्षात ईश्वर है जैसे भगवान राम, कृष्ण, भगवान बुद्ध हुए हैं तो आप क्या करोगे ? क्या भगवान को अपने घर ले जाओगे ? आपके मकान का तो केवल एक कमरा है भगवान के ठहरने का क्या प्रबन्ध करोगे ? आपकी स्त्री है, सन्तान है आपकी आय सीमित है। कितने दिन अपने भगवान को खाना खिला दोगे, कपड़ा दोगे ? थोड़ा बताइये। अपने मन से पूछिये। मन्दिर में तो आप प्रातः सायं जा सकते हो। क्या अपने भगवान के साथ निरन्तर रह सकते हो। सोचो ध्यान दो। प्रश्न बड़ा अद्भुत है।

मेरा मित्र प्रश्न सुन कर चुप रह गया, कोई उत्तर न दिया। आइये इस समस्या का हम समाधान करते हैं। हमको तो ऐसे ईश्वर के दर्शन चाहियें कि जब इच्छा हो उनके दर्शन करलें वरन अपने व्यवहार में मग्न रहें। बोलिये क्या यह सत्य नहीं है ?

ईश्वर की किरण जो इस जगत में आयी हुई है उसके दर्शन

करना ही क्या ईश्वर दर्शन हैं। यदि इस बात को ठीक मान लिया जाय तो परियाप्त मात्रा में समस्या का समाधान हो जाता है। आओ इस किरण के दर्शन करें ? ईश्वर की किरण हम में भी है। इस किरण की कैसे खोज करें ? इस किरण का स्थान हमारे अन्तर है। यह किरण हमारे अन्तर आई हुई है। प्रत्येक समय हमारे अन्तर विद्यमान है। इस किरण ही के कारण हम जीवित हैं। इसकी खोज बड़ी सुगम है। किरण नित्य और अनन्त है नाश नहीं होती। हमारा शरीर पंच भौतिक है नाश हो जाता है अतएव यह हमारा शरीर किरण नहीं है। मन भी किरण नहीं हो सकता, क्योंकि मन भी बनता है। जो वस्तु बनती है वह बिगड़ जाती है यह एक सिद्धान्त है। किरण मन नहीं, शरीर नहीं तो फिर शरीर, मन को छोड़ दो। इनके ऊपर चले जाओ। जो वस्तु आयेगी, वह भी माया से लथपथ है। उस पर भी आवरण आये हुए हैं, जिसको कारण शरीर, कारण मन कहा जाता है। इन आवरणों को भी उतार फेंको। किरण किरण में लय हो जायेगी। आगे का वर्णन करना कठिन है। क्या किरण का किरण में लय हो जाना किरण के दर्शन हैं किन्तु यह ईश्वर प्राप्ती नहीं है।

यह साधारण बात है कि वायुयान के दर्शन से वायुयान की प्राप्ती नहीं होती। भोजन के दर्शन से क्षुधा शान्त नहीं होती। कामिनी के दर्शन से काम की कभी पूर्ति नहीं होती। धन के दर्शन से धन की प्राप्ति नहीं होती। अपने इष्ट के नित्य प्रति दर्शन करें किन्तु दर्शनों से प्राप्ती तो नहीं होती। गुरु के दर्शन से गुरु की प्राप्ती कभी नहीं होती। गुरु की प्राप्ती तो गुरु का ज्ञान है।

आप धन चाहते हैं लक्ष्मी धन की अधिष्ठाता है, धन की देवी है, वह सबको धन देती है। आपने लक्ष्मी की प्रतिमा बनाली, आपने लक्ष्मी के दर्शन कर लिये, लक्ष्मी की पूजा आरम्भ करदी। लक्ष्मी ने प्रसन्न होकर धन देदिया। आप धनी होगये। क्या आपको लक्ष्मी की प्राप्ती हो गई ?

एक व्यक्ति कपड़ा बुनने की कला सीखना चाहता है। वह जुलाहे के पास गया उसकी सेवा की, पूजा की, भक्ति की। उसने प्रसन्न होकर कपड़ा बुनना सिखा दिया। जुलाहे के सभी गुण उसमें आगये। उसको जुलाहे की प्राप्ती होगई।

इसी प्रकार ईश्वर दर्शनों के पश्चात् ईश्वर प्राप्ती होनी चाहिये। अब प्रश्न रह गया कि ईश्वर प्राप्ती कैसे हो सकती है ?

आप को किस प्रकार के ईश्वर की आवश्यकता है ? क्या ऐसा ईश्वर चाहिये जो सन्तान दे, धन दे, कपड़ा दे, जगत के सर्व सुख दे अथवा ऐसे ईश्वर की आवश्यकता है जो कामनातीत हो, दुख सुख से परे हो। एक ऐसी अवस्था हो जो स्वत: आनन्द हो शान्ति हो।

कहते हैं ईश्वर प्राप्ती से मोक्ष मिल जाता है आवागमन समाप्त हो जाता है, जन्म मरणमिट जाता है, बूँद सागर में समा जाती है किन्तु एक योगी जी महाराज को पेटी में बन्द कर दिया गया और पेटी को एक गहरे गढ़े में रख दिया। ऊपर मिट्टी डाल कर पृथ्वी को दे दिया। चौवीस घंटे के पहरेदारी की व्यवस्था कर दी गई। महाराजा साहिब हर रोज वहां आते। ६ महीने के बाद योगी जी महाराज को निकाला गया, वह जीवित थे। चेतनता आ गयी।

ये कितनी अच्छी अवस्था है। इसे आत्मिक अवस्था कहते हैं। कोई विरला ही इस गति को प्राप्त कर सकता है। ऐसे महा पुरुष,महान आत्मा और सच्चाई के प्रतीक होते हैं। इन के दर्शन लाभ दायक है। ऐसे योगियों की संगति किसी बड़भागी व्यक्ति को मिलती है।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या यही ईश्वर भक्ति है ? क्या इसी को ही ईश्वर दर्शन कहते हैं ? क्या ऐसा साधन करने से व्यक्ति मुक्त हो जाता है ? जन्म मरण से रहित हो जाता है ?

इस प्रश्न का उत्तर वही व्यक्ति दे सकता है जिसने समाधि लगा कर देखी हो किन्तु ज्ञानी तो यह समझता है कि उसने आनन्द

लिया, क्योंकि आत्मा का भोजन आनन्द है। जब आत्मा शरीर और मन को छोड़कर अपने निज स्थान को चली गयी, उसको वहाँ पर पहुँच कर आनन्द मिला, मस्ती मिली। कहते हैं इस स्थान पर आनन्द ही आनन्द है।

मानव का संसार इस शरीर के साथ है। इस शरीर का भोग है दुख और सुख। शरीर से बेसुध हो जाने से संसार की चिन्ता जाती रहती है, क्योंकि मन संकल्प विकल्प उठाता रहता है। मन ही समाधी की अवस्था में गति हीन होगया। शेष आनन्द ही आनन्द रह गया। कितनी सुन्दर, उच्च अवस्था है, किन्तु यह ईश्वर दर्शन तो नहीं है, यह ईश्वर भक्ति भी तो नहीं है। इस से क्या व्यक्ति के जन्म जन्मातरों के शुभ अथवा अशुभ कर्म किये हुये कट जायेंगे ? क्या ऐसा व्यक्ति निर्वाण का अधिकारी हो गया ? यह एक जटिल प्रश्न है

देखा गया है कि इन योगियों को जब संसारिक व्यवहार करना पड़ा तो बुरी तरह से च्युत्त हुये। मन में अटकगये, स्थूल इन्द्रियों के आनन्द में फंस गये। महाराजा शान्तनु, बारह वर्ष तप करने के पश्चात् जब घर लौटे, नवका में बैठ कर नदी पार कर रहे थे। केवट की सुन्दर कन्या अकेली ही नवका चला रही थी। महाराजा का मन विचिलित होगया और सुन्दरी से विवाह कर लिया। श्रंगी ऋषि की भी आपने कथा सुनी होगी। महाराजा दशरथ ने अप्सराएं भेजीं, नृत्य हुआ। ऋषि ने एक के साथ विवाह कर लिया, संन्तान उत्पन्न की गयी। शम्सतवरेज सूफी बाबा हुये हैं। आप मौलाना रूम केगुरु थे। अब मस्ती में अनलहक २ पुकारा करते थे। वृद्धा अवस्था में मन चलायमान हो गया और एक सुन्दर युवती से विवाह करलिया। यहाँ पर किन २ महात्माओं, योगियों तथा ऋषियों की गणना की जाये। महात्मा लोग अपने मन को स्वयं टटोल कर देखें।

ऐसा जान पड़ता है कि इस संसार के इन्द्रिय जन्य आनन्द

योगियों की समाधी के आनन्द से अधिक आकर्षण करने वाले होते हैं।

किसी योगी ने अपने योग बल को प्रगट करना चाहा। लोभ में आगया वह भी पतित हुआ। जब इतनी ऊँची आत्मिक अवस्था पा-कर भी व्यक्ति गिर जाता है तो यह ईश्वर दर्शन न हुआ, एवम् ईश्वर भक्ति भी न हुई।

एक भक्त ने भगवान राम, श्री कृष्ण, यशुमसी या किसी और इष्ट की मूर्ती बनाई। उसका ध्यान आरम्भ कर दिया। उसके नाम का सुमिरन हो रहा है। मूर्ती के आगे हाथ जोड़कर मस्तक नवा कर बैठा है आंखें बन्द हैं, मन मगन है, मानसिक आनन्द व खुशी ले रहा है। सत्य है। कभी सन्तान मांगता है, कभी धन चाहता है, कभी संसार का सुख माँगता है।

चाहे यह अध्यात्मिकता का पहला सोपान है मन को खुश रखना आनन्द में लीन रहना एक विचित्र अवस्था है किन्तु प्रश्न उठता है कि क्या यह ईश्वर भक्ति है।

हवन संध्या करते हो। मन्दिर में गये माथे पर तिलक लगा लिया, घंटा व शंख बजाया, धूप दीप जलाया। मसजिद में गये नमाज पढ़ ली, गुरुद्वारे गये, भजन सुने, पाठ किया, गुरु वाणी पढ़ी सुनी, गिरजाघर में गये। व्याख्यान सुन लिया, बड़ी अच्छी बात है। शुभ कर्म है सराहनीय कर्म है किन्तु प्रश्न उठता है कि क्या यह ईश्वर भक्ति है।

ईश्वर का नाम लेना या ईश्वर को याद करना ईश्वर के गुण गाना अथवा महा पुरुषों का व्याख्यान सुनना तो ईश्वर भक्ति नहीं है। यह तो व्यक्ति इसलिये करता है कि व्यक्ति को ऐसा करने से आनन्द मिलता है। मन को एक प्रकार की शान्ति मिलती है कि तुम शुभ कर्म कर रहे हो। लोग भक्त कहेंगे, मान करेंगे इत्यादि। किन्तु ये ईश्वर भक्ति नहीं हैं।

मान लिया आपने मन्दिर बनवाये, गुरु द्वारे खड़े किये, मसजिद व गिरजाघर बनाये बड़ा नेक काम है, बड़ा शुभ कर्म है, यह दान है, पुण्य कर्म है। ऐसा करने से मन को खुशी व आनन्द मिला, सांसारिक प्रतिष्ठा मिली। यह मानना पड़ेगा कि आपका शुभ कार्यों की तरफ पग उठ रहा है। किन्तु यदि कहीं आपको जीवन-काल में ही उस मन्दिर, गुरुद्वारा, मसजिद तथा गिरजाघर, जिसका आपने निर्माण किया है, पर दूसरों की समालोचना होती हो, मनों को दुखित किया जाता हो, वहां पर नाना पाप व अपराध किये जाते हों, देशद्रोही का प्रचार किया जाता हो, आडम्बर रचाया जाता हो, अन्य धर्मों के महापुरुषों के जीवन पर कुशब्द प्रयोग किये जाते हों, बुराइयों का केन्द्र बन गया हो, सर्व साधारण का परिश्रम शक्ति द्वारा अर्जित शुद्ध कमाई का धन लूटा जाता हो, दान लेकर अपनी सम्पत्ति बनाई जाती हो तो आपको स्वीकार करना पड़ेगा कि आपने बहुत कुकर्म किया है, बड़ा भारी पाप किया है।

ऐसे कर्मों में ईश्वर भक्ती का तो अंश भी नहीं है। फिर ईश्वर भक्ती क्या हुई ? ईश्वर भक्ती केवल ईश्वर को प्रसन्न करना है। ईश्वर को प्रसन्न करना और है. ईश्वर के दर्शन अथवा ईश्वर को प्राप्त करना और है। क्या कोई साँसारिक धर्म मानव को ईश्वर भक्ती सिखलाता है कि ईश्वर को कैसे सन्तुष्ट किया जाता है। यदि सिखलाता है तो बता दो।

आओ उस दिशा में ध्यान दें कि ईश्वर को कैसे प्रसन्न किया जाता है। नियम है पिन्डे सो ब्रह्मांडे। यह सिद्धान्त बिलकुल यथार्थ है।

एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को खुश करता है उसी प्रकार कोई व्यक्ति ईश्वर को भी प्रसन्न कर सकता है।

एक व्यक्ति भूखे को भोजन देकर प्रसन्न कर सकता है, प्यासे को

जल पिलाकर, नंगे को वस्त्र देकर, रोगी को औषधि देकर, निर्धन को धन देकर, दीन की सहायता करके अपनी सहानुभूति देकर, कोमल चित्त से अपने मन में प्रत्येक के लिए दया धार कर बचनों से प्रसन्न कर सकता है। इसी प्रकार आप अपने ईश्वर को भी प्रसन्न कर सकते हैं, किन्तु वह तो भूखा नहीं, प्यासा नहीं, रोगी नहीं, किसी के आश्रित नहीं। वह तो आप धनी है। धन की उसको इच्छा नहीं। वह प्रेम व दया का आप भंडार है। फिर उसको कैसे प्रसन्न करोगे ? कैसे उसकी भक्ती करोगे ? कैसे उसके दर्शन करोगे ?

हमारा ईश्वर तो इस संसार में है ही नहीं। हमने उसको ऐसा माना हुआ है कि वह सर्व व्यापक है। होगा अवश्य, सर्वव्यापक होगा किन्तु हमें ऐसे सर्वव्यापक से क्या अभिप्राय, क्या लेन देन, क्या सम्बन्ध ! क्योंकि ऐसे ईश्वर से हमारा मन्तव्य सिद्ध नहीं होता। अग्नी सर्वव्यापक है हमको ऐसी अग्नी से क्या काम। जब अग्नी एक देशीय हो जायेगी हमारा काम बन जायेगा। खाना पकायेंगे खायेंगे। गर्मी मिलेगी आदि।

ईश्वर को सर्वव्यापक मान कर हमारा अर्थ सिद्ध नहीं होता। ईश्वर भक्ती नहीं हो सकती, ईश्वर दर्शन नहीं हो सकते। हमको तो ऐसे ईश्वर की आवश्यकता है जिसके हम दर्शन कर सकें। जिसको हम प्रसन्न कर सकें।

ईश्वर ने इस संसार की रचना की, यह मानना पड़ेगा। यदि वह यहाँ होता तो यहाँ कोई दुख कष्ट न होता, कोई रोग न होता, भूचाल न आते, तूफान न आते, जबकि सहस्त्रों नर नारी पशु पक्षी मर जाते हैं, अकाल मृत्यु ग्रस्त हो जाते हैं। कितना अनर्थ है !

युद्ध होता है विध्वंस हो जाता है नगर खंडहर बन जाते हैं। ईश्वर के राज्य में ऐसा अनर्थ नहीं होना चाहिये। वहां तो शान्ती की व्यवस्था होनी चाहिये।

सिद्ध होगया कि यहां ईश्वर नहीं है, जिस प्रकार सूरज यहां नहीं है, यहां तो सूर्य की केवल किरणें हैं। यदि सूर्य इस जगत में आजाय तो जगत जलकर राख हो जाय । यहाँ तो सूर्य की किरणें आती हैं सूर्य आप नहीं है। इसी प्रकार ईश्वर ने संसार रचा वह आप यहाँ नहीं है। उसकी किरणें यहाँ हैं, जो कि हर जगह व्यापक हैं चराचर जगत में विद्यमान है। प्रत्येक प्राणी पशु-पक्षी वृक्ष आदि में उसकी किरण व्यापक है।

तो भाई ईश्वर की भक्ति नहीं कर सकते हो, उसको प्रसन्न नहीं कर सकते हो तो उसकी एक किरण की ही भक्ति करलो। उसकी एक किरण की ही सेवा करलो। उसकी एक किरण को ही प्रसन्न करलो ।

आप में भी तो उसकी किरण है, वास्तविक किरण की सेवा करलो । इस किरण को प्रसन्न करलो जो आप के अन्तर है। किन्तु आप तो सदैव अपराध करते हो। क्रोध तुम में है। दूसरों से बादविवाद करते रहते हो, दूसरों को बुरा भला कहते रहते हो, दूसरों की निन्दा करते हो। दूसरों का भाग हरण करते हो। दूसरों की जानें लेते हो। माँसाहारी हो, कभी तुमको दया नहीं आती। दूसरों को कष्ट देते हो। तुम कामाधीन दूसरों की बहिन बेटीयों को बुरी दृष्टि से देखते हो, तुम अति पतित मानव हो। धन के लोभ में चोरी करते हो, डाका डालते हो। तुमने संसार को महान दुखी बना रखा है। कोई शुभ कर्म तुमने किया ही नहीं। अपकार का बदला उपकार में कभी न दिया, दूसरों के कटु शब्द तुमने सहन न किये, अपने अन्तर दृष्टि पसार कर देखो, कभी तुमने अपनी किरण को प्रसन्न किया ? कभी इस किरण की सेवा की ? नहीं।

पहले तुम अपनी किरण को प्रसन्न करलो। बताओ किया ? तुम अपनी किरण को प्रसन्न रख सकते हो। प्रत्येक समय आनन्द ले सकते हो। यदि आप यह कर सकते हैं तो आप धन्य हैं। आप

ईश्वर भक्ति के अधिकारी हैं। आप इस ओर प्रगति कर रहे हैं और अवश्य प्रगति होगी।

अब निर्णय हो गया कि हम ईश्वर की भक्ति नहीं कर सकते। ईश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते क्योंकि ईश्वर इस संसार में विद्यमान नहीं है। संसार में केवल उसकी किरणें आती है। ईश्वर की किरण की सेवा से ईश्वर की सेवा है। ईश्वर की किरण को प्रसन्न करना ही ईश्वर भक्ति है। और सबसे उच्च भक्ति निर्धन की सेवा है।

काल पुरुष इस जगत का अधिष्ठाता है, इस जगत का कर्ता है, सर्जनहार है। प्रत्येक जीव का कर्तव्य एवम् धर्म है कि वह अपने स्वामी को अपने पिता को प्रसन्न रखे। आप जिस महाराजा के राज्य में निवास करते हो तुम को उस देश के विधान के आधीन रहना होगा। यदि किसी को उस देश का बिधान अच्छा न लगे और बिधान के विरुद्ध काम करे, तो वह देश द्रोही कहलायेगा और उसको दंड मिलेगा। नहीं तो उस देश को छोड़कर चले जाओ।

इस संसार में विचरते हुये काल पुरुष के विधान में रहना होगा। तभी तुम उसको प्रसन्न कर सकते हो। उसके विधान की धारा है कि समय का सदुपयोग करो, समय को व्यर्थ मत जाने दो, काल का पूर्ण रूपेण लाभ उठाओ और समय के अनुकूल काम करो।

दिवस गंबाया खाय कर, रात गंवाई सोय।
हीरा जन्म अमोल था, विरथा दिया खोय॥
आज कहे मैं काल करूँगा, काल कहै मैं काल।
आज काल के बीच में, तेरा होगा काल॥
काल करे सो आज कर, आज है तेरे साथ।
काल काल तू क्या करे, काल है काल के हाथ॥

काल करें सो आज कर, आज करे सो अब ।
पल में परलय होयगी, बहुरि करेगा कब ॥

काल नाम है समय का, इस जगत में समय का राज्य है। समय की प्रतिष्ठा करो, हर काम में सर्व प्रकारण सफल रहोगे। काल भगवान प्रसन्न होकर अपनी दया की वर्षा करेगा।

दयाल देश का अधिष्ठाता दयाल महा पुरुष है उसको खुश करने के लिये उसके राज्य में घुसने के लिये, उसके दर्शन पाने के लिये तुम को दयाल बनना होगा। दयाल बनने के लिये दया करनी होगी, पर हितकारी बनना होगा। इसलिये दयाल बनने के लिये और दयाल को प्रसन्न करने के लिये दीन दरिद्रों की सेवा अनिवार्य है।

किसी भूखे को भोजन खिलाकर देखो, प्यासे को जल पिला कर देखो, नग्न् को वस्त्र देकर, निर्धन को धन देकर, रोगी को औषधी देकर देखो। फिर अपने मन की निरख परख करो, मन की क्या दशा होती है। हर्ष होता है, शान्ति मिलती है आनन्द मिलता है। यही ईश्वर भक्ती है। इसके अतिरिक्त ईश्वर भक्ती कोई नहीं। बाकी सब प्रदर्शन मात्र है।

जो ऐसी ईश्वर भक्ति करते हैं मैं उनको महा पुरुष कहता हूँ। मैं उनको नमस्कार करता हूँ। आदेश है कि यदि तुम आवागमन से छुटकारा चाहते हो तो ज्ञान सहित कर्म करो। ऐसा कर्म न करो जिसके फल की इच्छा आपको हो। आप के किसी कर्म में भी अंहकार न हो। सभी कर्म निष्काम हो। पूर्व कर्मों का फल जब भोग लिया गया, आगे कोई कर्म न रहा तो मुक्ती प्राप्त हो जायगी। बुन्द सिन्ध में समा जायगी, किरण वापिस चली जायगी और जन्म मरण नहीं रहेगा।

परन्तु आपने अपना ईश्वर आप रचा है आप ही उसका चित्रण किया है। उसमें उनेकों गुण भर दिये। सहस्राकार उसको कह दिया। जो गुण आप को भले लगे आपने अपने ईश्वर पर आरोपण कर दिये

उसको आपने दयालु कहा, कृपालु कहा, दीनबन्धु कहा, पाप विमोचन, आनन्दस्वरूप, शान्तिस्वरूप सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, न्यायकारी, सुखदाता कहा। अनेक स्तुतियां की।

यदि ईश्वर प्राप्त हो जाय जैसे कि जुलाहे का उदाहरण दिया गया और उसे जुलाहे की प्राप्ती होगई तो स्वीकार करना होगा कि ये सब गुण जीव में आने चाहिये। यदि किसी जीव को ईश्वर प्राप्त हो चुका है तो उस जीव में यह गुण आने चाहिये अर्थात वह दयालस्वरूप, कृपालु, आनन्दस्वरूप, शान्तीस्वरूप, सुख दाता होना चाहिये। यदि ऐसा है तब तो ईश्वर प्राप्ती है। इसकी जांच जीव आप कर सकता है।

सतगुरु सब का कल्यान करे
सब को राधास्वामी

दुर्गादास
चड़ीगढ़

शब्द

साहेब कौन कमी घर तेरो ॥ टेक ॥
भूले अन्न पियासे पानी, कपड़ा से तन घेरो।
जो कछु न्यामत सबै महल में, खरच खजाना ढेरो ॥ १ ॥
खाक से पाक कियो पल माहीं, हे समरथ बल तेरो।
भव से काढ़ि कियो तरनी पर, खेय लगावो सबेरो ॥ २ ॥
रहे न धाम छाँह दुनियाँ में, रहे न जम को चेरो।
राव से रंक रंक से राजा, छिन में बाजत तूरो ॥ ३ ॥
मानो सत्त झूठ जनि जानो, सत्त बचन है पूरो।
धर्मदास चरनन पर बिनवै, तुम गति सब भरपूरो ॥ ४ ॥

प्रवचन

परम दयाल फकीरचन्द जी महाराज

मानवता मंदिर होशियार २८-१२-७१

(गताँक पृष्ठ ४० से आगे)

हर एक बात को समझो और गुनो। यह कोई कठिन बात नहीं है।

बात बात में तत्व समझाऊं, खेल खेल मैं दरसाऊं

मैं ने तुम्हारे ही जीवन के उदाहरण दिये हैं। तुम्हारे अन्तर में मैं अस्पताल में नहीं गया और न मैं यह कहने गया कि तुम्हारा बटुआ मिल जायगा। तुम भी सच्चे हो और मैं भी सच्चा हूँ। यही अज्ञान है जिसने अनेकों धर्म और पंथ भारत वर्ष में पैदा कर दिये और यह साम्प्रदायक दुनियाँ बन गई। इस धार्मिक घृणा का परिणाम धार्मिक झगड़े होते हैं और इसीसे बंगला देश बना। क्या अच्छा हो कि यह महात्मा इस बात को समझें।

अपने मन को शुद्ध रक्खो। मनुष्य के मन के अन्दर मैल है। किसी को क्या कहूँ ! मैं अपनी कमजोरियों को स्वयं जानता हूँ। कोई आदमी अपनी कमजोरियाँ दूसरों को बताता नहीं है। मैं बता देता हूँ और उनको दूर करने की कोशिश करता रहता हूँ। मगर जीव के कई कर्म भी ऐसे होते हैं जो कोशिश करने पर भी नहीं जाते।

हंसी हंसी में सार लखाऊं, चुटकी बजाकर समझाऊं।
नहीं भयानक कथन है मेरा, रोचक है बाणी मेरी॥
सुलझादूं जड़ चेतन ग्रन्थी, युक्ति जानी है मेरी॥

दाता दयाल जी की बाणी रोचक थी। उसमें आकर्षण था। मेरी बाणी न रोचक है न भयानक है किन्तु यथार्थ है। मैंने यथार्थ बात को कहकर तुम्हारे सवाल का उत्तर देदिया है। यह युक्ति मुझे दाता दयाल जी से मिली। तुम लोग मुझे गुरु मानते हो। वास्तव में यह युक्ति मुझे सत्संगियों से मिली है। यदि मैं गुरुपदवी पर न आता तो इसका पता ही न लगता। सन् १९०५ ई. में मैं बहुत रोया करता था कि मुझे भगवान के दर्शन हो जाँय और मैं अपने घर चला जाऊं। उस समय मैं भी यही समझा करता था कि मेरे अन्तर दाता दयाल या श्री राम या श्री कृष्ण प्रगट हुये हैं। अब जब मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रगट होता है और मैं नहीं होता तो मुझे समझ आगई कि मेरे अन्तर प्रगट होने वाला मेरा अपना ही मन था और आत्मा था।

ऐ मानव ! तू स्वयं पूर्ण है मगर गुरु के बिना भटकता फिरता है। इसलिये सतगुरु की महिमा है। अपनी अपनी जगह पर सब गुरुओं की महिमा है मगर असली सतगुरु वह है जो ज्ञान दाता है।

मेरी संगत में जो आवे, तीर्थ राज स्नान करे।
काम अर्थ और धर्म मोक्ष के, तत्वों की पहिचान करे॥

तीर्थ में जाकर लोग तन का मैल साफ करते हैं और कपड़ों का मैल साफ करते हैं लेकिन सतसंग में जाकर बचनों को सुनकर और समझकर मन शुद्ध और पवित्र होता है। मन के भ्रम और अज्ञान का मैल दूर होता है। जब से मुझे यह ज्ञान हुआ कि मैं किसी के अन्दर नहीं जाता और जितने रूप रंग मेरे अन्दर प्रगट होते हैं, यह हैं नहीं मगर भासते हैं तो मैं सूक्ष्म से सूक्ष्म और कारण से कारण गति में चला जाता हूँ। मैंने उस परम तत्व को माना था। उस समय पता नहीं था मगर मन में एक भावना थी। अब जब वहाँ चला जाता हूँ तो सब कुछ भूल जाता हूँ। केवल

मेरा अपना स्वरूप ही शेष रह जाता है। जो व्यक्ति अपने उस रूप को जानकर ज्ञान प्राप्त करलेता है उसको धर्म अर्थ काम मोक्ष मिलने चाहिये क्योंकि सब खेल मनुष्य के भाव विचार और वासना के हैं।

देखो मि० साहनी ! छोटी अवस्था से मैं अपनी स्त्री से घृणा किया करता था। परमात्मा से प्रेम करता था। मैं दुखी रहा करता था। मैंने अपने गुरु महाराज को लिखा। वह लिखते हैं:—

भागवती जब भाग में आई। अब भागन में कौन भलाई ॥

उस समय तो यह पता नहीं था। लेकिन अब समझ में आता है कि मुझे इससे घृणा क्यों थी। विवाह के समय पर्दा करके लड़का और लड़की को एक दूसरे का मुंह दिखा देते हैं और उनसे कहते हैं कि एक बार एक दूसरे का नाम ले लो। फिर जीवन भर एक दूसरे का नाम न लेना। मेरी स्त्री का नाम क्रोधो था। मैंने सोचा कि जिसका नाम ही क्रोधो है उसमें तो क्रोध ही रहेगा। मेरी और उसकी बनेगी कैसे ! बस इस एक ख्याल ने मेरे जीवन को दुखी बना दिया। यदि वह अच्छा काम भी करती तोभी मैं उसको बुरा ही समझता। अब मैं महसूस करता हूं कि वह निर्दोष थी।

गुरु करता क्या है ? वह एक ख्याल दे देता है और मनुष्य अपनी श्रद्धा से उसको गृहण करलेता है। वह ख्याल विकसित हो जाता है। संतों के मार्ग में यह ख्याल दिया जाता है कि तू सुरत है, उस मालिक का अंश है। यह दुनियां चार दिन का खेल है इसलिये तू अपने रूप को जान। यही नाम दान है। फिर उस अवस्था तक पहुंचने के लिये सुमिरन ध्यान और भजन है। नाम दान एक ख्याल है, संस्कार है, Suggestion है। आज मैं ने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर भी देदिया और सत्संग भी करादिया।

मैं हमदर्दी के भाव से तुमको यह कहना चाहता हूं कि मन को

की लड़की १२ वर्ष से रीढ़ की हड्डी के नासूर से बीमार थी उसके पाप संकल्प का मन्त्र पढ़वा कर लिये। तीसरे कानपुर में एक ब्रिगेडियर का लड़का १४ वर्ष से पोलियो से बीमार था, उसके पाप लिये मगर साथ ही यह कह दिया कि या तो एक वर्ष में स्वस्थ हो जायगा और उसके कोई अच्छे कर्म न हुये तो मर जायगा। पहिले दोनों तो ठीक होगये और जीवित हैं और तीसरा ११ महीने २८ दिन के बाद आदमपुर (एकग्राम) में शरीर छोड़ गया। यदि मैं ने उनके पाप लिये होते तो मुझे कुछ होजाता मगर मुझे कुछ न हुआ।

इस बुढ़ापे में मैं जहाँ इस ज्ञान के प्रचार के लिये व जो मैं ने मानवता मन्दिर बनाया है, कुछ उसकी उन्नति के लिये वहां जीवों के भ्रम अज्ञान को मिटाने के लिये भी काम करता हूँ और कहना चाहता हूं कि ऐ इंसान ! जो कुछ तुझको मिला या आगे मिलेगा वह तेरा अपना कर्म फल है। तेरा अपना विश्वास और श्रद्धा है। तेरे विचार हैं। यह श्रद्धा विश्वास जिसका जी चाहे जहाँ रखले। मनुष्य के विचारों में बड़ी भारी शक्ति है। लोग कहते हैं कि संत जीवों के भार उठाते हैं। लोग यह उदाहरण देते हैं कि बाबर बादशाह ने हुमायूं की बीमारी ले ली। हुमायूं बचगया और बाबर मर गया। यह एक एतिहासिक घटना है। इस में भी विश्वास काम करता है।

कई संत कहते हैं कि हम नाम देकर जीवों के सारे पाप लेलेते हैं। मैं इस युग में ज्ञान के प्रचार के लिये अवतार लेकर आया हूँ ताकि यह अज्ञान रूपी अंधेरा जो छाया हुआ है इसमें कमी आजाय और मानव जाति अपने जीवन को आप बनाये। जिसके दिल में यह ख्याल है कि मैं नाम देकर दूसरों के पाप लेलेता हूं, उसको दूसरों के पापों का दंड अवश्य मिलेगा। यदि यह ठीक है तो जितने आदमी यह नाम देते हैं यह दूसरों के पापों के बदले में कितने दुख

सहेंगे यह सोचने की बात है। यह जितना खेल है यह मनुष्य के अपने विश्वास और अपने विचार का परिणाम है। जो संत नाम देकर दूसरों के पाप लेते हैं वह संत नहीं हैं किन्तु साधु हैं। संत को न कोई पाप है न कोई पुन्य । उसके दिमाग में 'पाप पुन्न भईं दोऊ कहावत'।

मैं साहस पूर्वक कहता हूँ कि ऐसा नाम देने वाले महात्मा जो यह प्रोपेगंडा करते हैं या करवाते हैं कि नाम लेलो तो गुरु तुम्हारे सब पाप लेलेगा, शायद लेते होंगे, मगर वह स्वयं संत नहीं हैं। जीवों का भार लेना क्या है ? जैसे बच्चे गलती करते हैं और अपने अज्ञान वश माता पिता को तंग करते हैं। वह उसके व्यवहार को खुशी से सहन करते हुये यह आशा रखते हैं कि किसी दिन इन बच्चों को सच्ची समझ आजायेगी। यह है भार उठाना। सतगुरु बाणी कहता है। जो उसकी बाणी को समझ जाते हैं उनको जो कुछ मिलता है वह कबीर साहब की जुबानी सुनो—

सुन सतगुरु की बानी लो।
ताहि चीन्ह हम भये वैरागी, परिहर कुल की कानी लो।
तब हम बहुतक दिन लों अटके, सुन सुन बात बिरानी लो ॥

कबीर साहब का कथन है कि सतगुरु की बाणी को सुनकर हम वैरागी होगये। जो जिस कुल या वातावरण में पैदा होता है वह उसी वातावरण से जो दुख सुख उठाता है वह दूर होगया क्योंकि गुरु की बाणी से उसको समझ आजाती है और उस समझ से वह दुख सुख को महसूस नहीं करता।

अब कुछ समझ पड़ा अन्तरगत, आदि कथा परमानी लो ॥

सतगुरु की बाणी सुनकर मुझे समझ आगई और मुझे अन्तर की दशा का पता लग गया। मुझे क्या पता लगा ? यह कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। मेरा रूप जागृत, स्वप्न, अभ्यास और अन्त समय में लोगों की सहायता करता है मगर मैं नहीं होता। इस ख्याल से

मुझ को संत मत की महानता और संतों की दया का, जो कि केवल बाणी कह कर और समझा कर जीवों को शान्ति दिलाना है, समझ आगई और मुझे निश्चय होगया कि मेरे अन्तर में जितने रूप रंग भाव विचार पैदा होते हैं यह सब के सब हैं नहीं मगर भासते हैं और कल्पित हैं। यह है संत मत की दया जो मुझे प्राप्त हुई।

मन मति गई प्रगट भइ सम गति, रमता से रुचि मानी लो ॥

इस ज्ञान से समता आगई और शान्ति मिल गई क्योंकि अब मैं अपने अन्तर विचारों में फंसता नहीं। यह संत की महिमा है जिसने जीवों को सार भेद देकर उनके अज्ञान का नाश किया।

लालच मोह ममता की, मिट गई ऐंचा तानी लो।

लालच, लोभ, मोह और काम आदि मन के भाव हैं। यदि कोई आदमी बिना ज्ञान के उनको रोकना चाहे तो मेरी समझ में यह रुक नहीं सकते। यह मेरा अनुभव है। और कोई उपाय रोकने का होगा तो मुझे ज्ञात नहीं।

चंचल ते मन निश्चल कीन्हा, सुरत निरत ठहरानी लो।

मनुष्य का मन चंचल है। इस चंचलता से ही जीव दुखी है। जब ज्ञान होजाता है तो फिर मन सोचता भी है और समझता भी है मगर मन चंचल नहीं होता। मुझे संत मत से यह लाभ हुआ। मेरा यही प्रयोजन बाहर दौरा करने या सतसंग कराने, टेपरेकार्ड कराने और पुस्तकें लिखने का है।

कहैं कबीर दया सतगुरु तें, लखी अटल रजधानी लो ॥

सतगुरु की दया क्या है ? यह शब्द कबीर साहब का है। जो कुछ मेरा अनुभव था उसका समर्थन कबीर साहब की बाणी करती है इसलिये जो इस सत्यता को वर्णन करते है मैं उसे सत्य मानकर उनको नमस्कार करता हूँ।

प्रवचन

परम दयाल जी महाराज

स्थान—मरसोंहेड़ी (सहारनपुर) २४-२-७२

शब्द

सचमुच खेल ले मैदाना ।
शब्द गुरु को दृढ़ कर बांधो, सुरत की खींच कमाना ॥
कड़ा बीन करु मन को वस करि, मारो मोह निदाना ॥
फाका फरी ज्ञान का गदका, बाँधि मरहटी बाना ।
सनमुख जाय लड़ै जो कोई, वही सूर मरदाना ॥
रंजक ध्यान ज्ञान की पट्टी, प्रेम बारूद खजाना ।
भरि भरि तोप झड़ाझड़ मारो, लूटो मुलक बिगाना ॥
कहें कबीर सुनों भाई साधो, प्रेम में हो मस्ताना ।
अमर लोक में डेरा दे के, सतगुरु हना निसाना ॥

मैं अब सत्संग कराने के योग्य नहीं रहा । क्यों ? क्योंकि एक तो शारीरिक अवस्था दिन प्रति दिन कमजोर होती जारही है । ८५ वर्ष का होगया हूँ । दूसरे आप दुनियां वालों को सत्संग की आवश्यकता नहीं है । तुम लोग तो धन दौलत, घर पुत्रों और मुकदमों के पीछे फिर रहे हो । मैं रात को यहां आया । मेरी जो दशा इन लोगों ने की, क्या कहूँ । क्या मेरा यह कोई जीवन है । एक आदमी कंधे से पकड़ कर इधर खेंचता है कि बाबा जी इधर चलिये । कोई आदमी दूसरी ओर खेंचता है कि इधर चलिये । यह थी मेरी दशा । वास्तव में बात यह थी कि सरदार साहब ने मकान बनाया था । उनकी यह इच्छा थी कि बाबा मेरे मकान में अगर चला जाय तो मेरा मकान संवर जायगा और हम सुख से

जीवन गुजारेंगे। और क्या था ? यह कर्म चक्र है। ऋषि, मुनि, पीर पैगम्बर सब को अपना अपना कर्म भोगना पड़ता है। मैं भी भोगता हूँ। आज मौज से यह शब्द निकला !—

सचमुच खेल ले मैदाना।

यह संतों का मार्ग है। कहां जाने के लिये ? अपने घर जाने के लिये। आप लोग नाम लेते हो, अपने घर जाने के लिये। नाम तो लेलिया मगर घर जाने का यतन तो कोई नहीं करता। प्रत्यक्ष में नाम लेने से या किसी को गुरु मान लेने से तो तुम्हारा काम नहीं बनेगा। गुरु जो बचन कहता है उस पर अमल करो तब तुम्हारा बेड़ा पार होगा।

हम कहाँ से आये हैं ? हमारा शरीर माँ के पेट से आया है। बाप के वीर्य में हम छोटे से कीटाणु थे। वह मां के पेट में आया। वह एक बहुत छोटा कीटाणु होता है लेकिन पालन पोषण के बाद वह एक शरीर बन जाता है। वह अपनी प्रकृति के अनुसार खेल खेलता है। कहीं वह राम बन गया, कहीं कृष्ण के रूप में प्रगट हुआ और कहीं वह महात्मा गाँधी बन गया। कहीं दरिद्री बनगया और कहीं पापी। हम इस माया के चक्र में खेलते रहते हैं। यदि खेल खेलना है तो अपने आदि घर जाने के लिये खेलो अर्थात् शब्द और प्रकाश में जाने के लिये जहां से कि हम आये हुये हैं। वह जो छोटा सा कीटाणु है वह बाप ने जो खुराक खाई है उससे बना है। खुराक प्रकाश और सूर्य की गर्मी से बनता है। इसलिये हम प्रकाश स्वरूप हैं और हमारा घर प्रकाश में है। जिसको पारब्रह्म कहते हैं या शब्द ब्रह्म का देश कहते हैं, वह देश ऊपर है। यहां नहीं है। जिस तरह कि सूर्य की किरणें यहां आकर सब सृष्टि को उत्पन्न करती हैं मगर सूर्य यहां नहीं है, सूर्य तो करोडों मील दूर है लेकिन उसकी किरणें यहाँ आती हैं, ऐसे ही वह पारब्रह्म देश यहाँ नहीं है वह सूर्य, चन्द्र, तारगणों—भूः भुवः स्वः महः जनः तपः से ऊपर है। वहाँ

से उसकी किरणें आकर इस शरीर में आती है। हमको उस देश में वापिस जाना है मगर जायगा कौन ? वह जिसको इस दुनियाँ के नाशवान होने का निश्चय होगया है।

अब कोई आदमी मुझे कहीं लेजाना चाहता है और कोई अपने स्वार्थ वश कहीं ले जाना जाहता है। अब इन दीवानों से पूछो कि मेरे बुढ़ापे का भी किसी को ख्याल है। गुरु चाहे मरे या जीवे, इस बात की इन को चिन्ता नहीं है। मैं हैरान हूँ कि यह लोग मुझे इधर उधर लेजाकर क्या करेंगे ! जो कुछ भी किसी को मिलता है वह उसका अपना विश्वास है। मैं कुछ नहीं करता। केवल शुभ भावना देता हूँ। मेरे पास इसके सिवाय और कुछ नहीं। दूसरे महात्माओं के पास होगा ! बात सच्ची कह रहा हूँ। चूंकि इस आदमी का भाई फांसी से बच गया, शायद मैं ने भी कह दिया होगा कि बच जायगा, अब यह समझता है कि बाबा ने बचा दिया। जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके कर्म, उसकी श्रद्धा और विश्वास का फल मिलता है। तुम गृहस्थी लुटे जारहे हो। तुम को हम महात्माओं ने और सम्प्रदाय वादियों ने मूर्ख बनाया हुआ है। तुम को सचाई का पता नहीं है। तुम अज्ञान में आकर इधर उधर दौड़ते फिरते हो। कर्बीर साहब कहते है कि यदि मैदान में खेलना है तो सच्चे बनकर खेलो।

शब्द गुरु को दृढ़ कर, बाँधो सुरत की खींच कमाना।

गुरु जो है वह ज्ञान है अनुभव है, विश्वास है, अकाल पुरुष है, ब्रह्म है, शब्द है या नाम है। नानक साहब की बाणी रेडियो पर कभी कभी सुना करता हूं।

पूरे गुरु से सहज मत पाई, पारब्रह्म ध्यान लगाइयोरे।

ऐसे ऐसे शब्द गुरु नानक साहब कहते हैं। हिन्दुओं में भी पार-ब्रह्म कहा है। मैं पारब्रह्म के साथ प्रकाश लगा देता हूँ। केवल शब्दों का अन्तर है। कहीं शब्द और प्रकाश कह देते हैं। लोग शब्दों

और बाणी के पीछे पड़कर आपस में गैरियत रखते हैं ।

कबीर साहब कहते हैं कि यदि खेलना चाहते हो तो तुम्हारे अन्तर जो शब्द ब्रह्म है, जो अनहद बाणी है, जो उद्गीत है, प्रणव है, जिसका वर्णन उपनिषदों में आया है, जिसका वर्णन सब संतों ने किया है, उसके साथ अपनी सुरत को जोड़ो । जब तक तुम्हारा सम्बन्ध मन से है तब तक बाहर के गुरु से भी सम्बन्ध रहेगा । जब मन को छोड़ जाओगे तो फिर वाह्य गुरु की भी आवश्यकता नहीं । मगर दुनियाँ इससे निकलना नहीं चाहती । यदि निकल भी जाय तो मन फिर खेंच लेता है । किसी को क्या कहूँ मैं बूढा होगया, जीवन भर अभ्यास करता रहा मगर अब भी कभी कभी मन खेंच लेता है लेकिन जब मन में आता हूं तो सुमिरन ध्यान करने लग जाता हूं । कई बार ऐसा भी होता है कि मन सुमिरन ध्यान में भी नहीं लगता तो फिर प्रेम करने लग जाता हूँ । इस मन की बड़ी विचित्र दशा है । मन के साथ लड़ाई करनी पड़ती है । घबराने की आवश्यकता नहीं । सब के साथ ऐसा होता है । चले चलो । आदमी गिरता रहता है । यह मन की दशा है । कभी प्रकृति ऐसी होती है कि इस ओर रुझान नहीं होता । कभी शरीर की दशा ठीक नहीं रहती । मैं ने यह तजुर्बा किया है कि जब शरीर की अवस्था ठीक नहीं होती तो सुमिरन ध्यान की ओर तव्वजह कम जाती है । अब शरीर दिन प्रतिदिन दुर्बल होता जारहा है । चूंकि मुझे आप लोगों की बदौलत ज्ञान हो चुका है कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता इसलिए जो रूप मेरे अन्तर प्रगट होते हैं वह मुझे खेंच नहीं सकते । अब कमजोरी या बीमारी की दशा में जो रूप मेरे अन्तर प्रगट होते हैं वह मुझे खेंच नहीं सकते क्योंकि मुझे निश्चय हो चुका है कि यह कल्पित हैं । हैं नहीं मगर भासते हैं । इससे मुझे यह लाभ हुआ कि मुझे असली और सच्चे सतगुरु का पता लग गया । सच्चा सतगुरु है प्रकाश, पारब्रह्म । तुम्हारे अन्तर में जो रूप रंग पैदा होते

हैं वह क्या हैं ? वह तुम्हारा अपना ही विश्वास और कर्म है ।

कबीर साहब कहते हैं कि यदि तुम इस मैदान में खेलना चाहते हो तो शब्द गुरु को पकड़ो लेकिन तुम शब्द को तो तब ही सुन सकते हो जब तुम उसको सुरत से अच्छी तरह पकड़ सको ।

कड़ाबीन कर मन को बस कर, मारो मोह निदाना ।

कड़ाबीन पहलवान का एक दाव होता है । यह दाव लगा कर मन को वश में करो ताकि यह मोह से बच जाय । मेरा मोह तो केवल तुम लोगों की बदौलत गया । मैं ने स्पष्ट रूप से कहा है । कोई पर्दा नहीं रक्खा, क्योंकि मुझे निजी स्वार्थ नहीं है । यह ठीक है कि मेरे इस ख्याल से यह जो मुझे अपने मकान में लेगया या तुम लोग अपने घरों में ले जाते हो, उनको मेरे इस स्पष्ट वर्णन से हानि होती है क्योंकि उनकी अज्ञानता की श्रद्धा को धक्का पहुँचता है मगर जब तक यह अज्ञान का भाव न टूटेगा, तुम अपने घर नहीं जासकते । कब तक बाहर के गुरु का गुण गान करते रहोगे । वह तुम्हारे मन का रूप है और मन का ही खेल है । इससे तुम्हारे मन को आनन्द मिलेगा । यह ठीक है कि वाह्य गुरु की सेवा करो और उससे प्रेम करो ।

धन दोगे धन मिलेगा । मान दोगे मान मिलेगा । प्रेम दोगे प्रेम मिलेगा । हमने धन दिया हुआ है । हमको धन मिलता है । हमने मान सम्मान किया है हमको मान मिलता है मगर यह सांसारिक बातें है । इनके साथ परमार्थ का कोई सम्बन्धनहीं है । दुनिया वालों के साथ यह भी हो जाय तो मुबारिक है । ग्रहस्थियों को प्रेम रखना चाहिये मगर जीवन भर नहीं । यदि जीवन भर रक्खोगे तो तुम अमर घर नहीं जासकते । जन्म लेते रहोगे । अच्छी अच्छी योनियां मिलती रहेंगी लेकिन अपने घर तब ही जाओगे जब शब्द गुरु को पकड़ोगे । यह राधास्वामी मत में 'प्रेम बानी' में लिखा हुआ है कि अन्त समय में फिल्म चलती है । जिस गुरु से नाम लिया हुआ

है, वह गुरु भी आजाता है। शब्द भी सुना देता है फिर भी जीव को कुछ समय के लिए सूक्ष्म शरीर में ऊपर के लोकों में रहना पड़ेगा। उसको अपने गुरु के दर्शन भी होते रहेंगे, सत्संग भी मिलता रहेगा। फिर जब कोई संत सत्गुरु दुनियाँ में आयेगा वह जीव जन्म लेकर उसके सम्पर्क में आयेगा और अपनी बाकी कमाई पूरी करेगा। यह हुजूर महाराज राय सालिगराम साहब का कथन है। यदि मैं स्पष्ट वर्णन नहीं करता तो तुम लोग अज्ञान में आकर मेरी सेवा करोगे। बाबा ने मेरे भाई को फाँसी से बचा लिया या बाबा फकीर के प्रशाद से मेरे लड़का होगया या मेरा यह काम होगया। यदि मैं स्पष्ट वर्णन नहीं करता हूँ तो तुम लोगों को धोके में रखता हूँ। तुम मेरा मान करोगे, रुपया दोगे। यदि मैं वह रुपया खाजाऊं तो मैं धोखे बाज हूँ, अपराधी हूँ और पापी हूँ। किसी भी गुरु ने तुम को सच्ची बात नहीं बतलाई। उनका भी कोई दोष नहीं है, तुम लोग सच्ची बात सुनने को तैयार नहीं। जहाँ से किसी का काम बन गया वह उसकी प्रशंसा करता है। तुम लोग मेरी प्रशंसा करते हो मगर मैं जानता हूँ कि मैं कुछ नहीं करता। मेरे स्पष्ट वर्णन से मेरी आत्मा पर कोई बोझ नहीं है। जो जी चाहे सेवा करो। जितना मैं ने पिछले जन्म का तुम लोगों से लेना है वह भुगतान करना पड़ेगा। कोई बाप बनकर लेता है कोई बेटा बनकर लेता है, कोई चेला बनकर लेता है। कोई चोर बनकर लेता है, कोई ठग बनकर लेता है। यह संसार कर्म क्षेत्र है।

बेटियो ! तुम आजाती हो। मैं बहुत ऊंचा चला गया हूँ। मुझसे हेरा फेरी करके बात नहीं कही जाती। जब तक किसी को यह ज्ञात नहीं होता कि जितने रूप रंग आदि अन्तर में प्रगट होते हैं यह माया हैं तब तक मोह कैसे कटेगा ! तुम्हारे अन्तर एक रूप प्रगट होता है। तुम उसको सत्य मानते हो तो तुम्हारा मोह कैसे कटा।

मैं सचाई का जिज्ञासु था। दाता दताल जी महाराज ने मुझ पर दया की कि उन्होंने यह काम मुझे दिया और कहा कि फकीर ! तुमको राधास्वामी दयाल के दर्शन सत्संगियों के रूप में होंगे। आप लोगों की दया से मुझे ज्ञान मिलगया। इसलिये जो ज्ञान मैं ने प्राप्त किया है वह आपको वर्णन कर दिया।

फाका फरी ज्ञान का गदका, बाँधि मरहटी बाना।

मरहटों की लड़ाई का यह एक उदाहरण है कि वह लड़ाई के समय लंगर लगोटी और धोती आदि को कसकर बाँध लेते हैं। फिर फिर सब सावधानी से लड़ते हैं। कबीर कहते हैं कि ऐसे ही ज्ञान का गदका हाथ में लेकर इस मन से लड़ाई करो अर्थात अभ्यास के समय जितने रूप रंग आदि तुम्हारे अन्तर प्रगट होते हैं उनको ज्ञान से काट दो कि यह हैं नहीं किन्तु भासते हैं। उनमें फसो नहीं।

सम्मुख जाय लड़े जो कोई, वही सूर मरदाना ॥

जब तुम अभ्यास करने बैठते हो तो तुम्हारे अन्दर कोई रूप प्रगट होता है या कोई विचार आजाता है। तुम चाहते हो कि यह न आये मगर वह आता है। तुम्हारा मन इधर उधर भागता है। उसको रोकने के लिये ज्ञान का गदका चाहिये। जो विचार तुम्हारे अन्तर आते हैं, उनको यह समझ कर कि यह हैं नहीं, अपनी सुरत को शब्द और प्रकाश की ओर लेजाओ। यह शूरवीर का काम है। मैं ने बहुत अभ्यास किया और तुम लोग भी करते हो। गिरते हो कि नहीं गिरते ? यह मैं अपना अनुभव कहरहा हूँ। पहिले जो रूप मेरे अन्तर आया करते थे उनको दूर करने में मुझे कष्ट होता था। मैं रूपों के साथ प्रेम करने लग जाता था या बातें करने लग जाता था। अब मेरी समझ में आया कि यह सब माया है। अब मैं उनमें फंसता नहीं और अपने आप को शब्द और प्रकाश में ले जाता हूँ।

रंचक ज्ञान ध्यान की पट्टी, प्रेम बारूद खजाना।

यदि तुम लोगों को स्त्री, धन और साँसारिक वस्तुओं से प्रेम

है तो अपने असली घर नहीं जासकते। वहाँ तो तुम तब जासकोगे जब शब्द ब्रह्म और प्रकाश ब्रह्म से प्रेम होगा। यदि तुमको वहाँ की लगन और इच्छा नहीं है तो तुम वहाँ नहीं जासकते। इसलिये यह नाम हर एक आदमी के लिये नहीं है। मैं ने किसी को नाम नहीं दिया। केवल सत्संग करता हूँ। आजकल तो गुरु लोग अपने डेरे और गद्दियाँ बनाने के लिये जो कोई भी आता है उसको नाम देदेते हैं।

भर भर तोप झड़ाझड़ मारो, लूटो मुलक बेगाना ॥

यदि लड़ाई के मैदान का एक उदाहरण है। इस तरह साधन करने से यह होगा कि जो तुम्हारी दुनियाँ है यह टूट जायगी और तुम अपने असली घर अर्थात् पारब्रह्म और शब्द ब्रह्म में प्रवेश कर सकोगे। वहां आनन्द ही आनन्द है। आदमी इस दुनिया को भूल जाता है। वहां न शरीर का चेत रहता है और न इस दुनियां का। वहां एक बड़े आनन्द और शान्ति की अवस्था है।

कहैं कबीर सुनो भाई साधो, प्रेम में हो मस्ताना।
अमर लोक में डेरा दे के, सतगुरु हना निशाना ॥

कबीर साहब कहते हैं कि इस तरह साधन करते हुए प्रेम में मग्न होजाओ। प्रेम किसका? फकीरचन्द का नहीं। यदि जीवन भर फकीरचन्द से प्रेम करते रहोगे तो तुम्हारा बेड़ा पार नहीं होगा। ऐ ब्राह्मण देवताओं! मैं तुमको लूटने नहीं आया। मैं जो बात कहता हूँ उस पर अमल करो। तब तुम्हारा बेड़ा पार होगा।

वाणी गुरु गुरु है बाणी, बाणी अमृत सारे।

तुम बाणी को तो समझते नहीं लेकिन गुरु की देह से प्रेम करते हो। हाँ, इस प्रेम से तुमको आनन्द मिलेगा, दुनियाँ के पदार्थ मिलेंगे और ऋद्धि सिद्धि भी तुम में आजायगी। मगर तुम अपने घर नहीं जासकते। मुझसे अधिक बोला नहीं जाता। मैं अपनी जिम्मेदारी

को महसूस करता हूँ। चार दिन का जीवन है। मैं पाखंड जगा के नहीं जाना चाहता। मेरे पास शुभ भावनायें हैं। यदि मेरी शुभ भावनाओं से किसी को कोई लाभ पहुँचता है तो मैं सच्चे दिल से चाहता हूं कि आप लोग जिस-जिस ध्येय से मेरे साथ प्रेम करते हो तुम्हारा वह ध्येय पूरा हो। इसके अतिरिक्त मेरे पास और कुछ नहीं है।

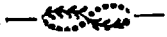

शरण

आजा शरण बचा लूँगा ,।
तू है मेरा मैं हूँ तेरा, तन मन धन से प्यारा ।
तू आँखों का तारा मेरे, मैं तेरा रखवारा ॥
जुज कुल का है कुल जुज का है, धर मन में परतीती ।
जब जुज है तब कुल से प्यार कर, सीख शब्द मत रीतो ॥
स्वारथ वश नहीं बना हूँ तेरा, नहि स्वारथ मन मेरे ।
परमारथी परम उपकारी, क्या आया चित मेरे ॥
तन के बंधन मन के बंधन, धन के बँध बँधाना ।
बन्ध बन्ध में बन्ध बन्ध में, बन्ध बन्ध उरझाना ॥
जब कोई नहीं नहीं तेरा सहाई, मैं ही रहा सहाई ।
अब भी सदा सहाई तेरा तजि दुरमति दुचिताई ॥
उल्टी समझ तेरे मन भाई, मन से मुझे भुलाया ।
भूला भटका देख के अब मैं, तुझे बचाने आया ॥
राधास्वामी दीन दयाला, दीन अधीन सहाई ।
परम सनेही परम हितैषी, ले उनकी शरणाई ॥

सैन (सैना) जी भक्त की कथा

सैन जी जाति के नाई और स्वामी रामानन्द जी के चेले थे। राजा के यहाँ नौकर थे। बाल बनाने, तेल लगाने और शरीर के मलने का काम करते थे। साधु सेवा का इष्ट था। एक दिन महल को जा रहे थे। राह में साधु मिले। उन्हें अपने घर लाकर नहलाया धोलाया और भोजन कराया। फिर सत्संग होने लगा। उसमें यह ऐसे मग्न और बेसुध हुए कि राजा की सेवा का ध्यान जाता रहा। इतने में इन्हीं के रूप रंग का एक मनुष्य राजा के पास गया और अपनी सेवा से उसे बहुत ही प्रसन्न किया। यह देर से पहुँचे और अपने अपराध के क्षमा करने के लिये प्रार्थना की।

राजा बोले "सैना ! तू अभी आया हुआ था। आज तूने अपनी सेवा से मुझे बहुत ही प्रसन्न किया। मेरा शरीर फूल के समान हलका है परन्तु क्या बात है आज से पहिले मेरा शरीर तूने इस प्रकार नहीं मला था।

सैन यह समझकर कि राजा बातें बनाता है हाथ बाँधकर बोला "महाराज ! मुझसे चूक हो गई। आप राजा हैं। दया के सागर हैं। मुझे अपना सेवक जानकर अपराध क्षमा कीजिये।"

राजा मुस्कराया "तू कहीं बावला तो नहीं हो गया ! देख तूने मेरा बाल बनाया है या नहीं ? मुझे तू आप नहला धुला गया। अब बहकी-बहकी बातें करता है। यदि तुझे विश्वास न हो तो औरों से भी पूछ देख।" सब लोगों ने राजा की बात सच्ची ठहराई। अब उसे निश्चय हो गया कि आज भगवान ने आप आकर मेरी जगह राजा की सेवा की है। और उन्हीं के हाथ लगने से इसका शरीर और मन फूल के समान हलका और विमल हो रहा है। तब इसने स्पष्ट शब्दों में कह दिया "महाराज ! मैं तो आया नहीं था। साधुओं की सेवा में देर हो गई थी हाँ मेरी जगह दया सागर भगवान ने आप आकर सेवा की है।" फिर क्या था ! वह श्रद्धा के साथ सैना के पाँवों पर गिरा और उसका चेला बन गया। राजा के सारे संबन्धी और कर्मचारी उसके शिष्य हो गये। (महर्षि शिव)

—:o:—

सत्संग परमदयाल जी महाराज

(स्थान—इटारसी ३—२—७२ ई०)

गुरु ने अब दीना भेद अगम का। सुरत चली तज देश भरम का ॥
बल पाया अब विरह मरम का। भटकन छूटा फेरो हरम का ॥
बरसन लागा मेघ करम का। संशय भागा जनम मरन का ॥
तोड़ दिया अब जाल निगम का। सुख पाया अब हम दम दम का ॥
फल पाया आज हम सम दम का। भंवर हुआ मन सेत पदम का ॥
फूंक दिया घर लाज शरम का। काटा फंदा नियम धरम का ॥
ज्ञान ध्यान वाचक हम छोड़ा। भगति भाव का पहिना जोड़ा ॥
भगति भाव की महिमा भारी। जानेंगे कोई संत विचारी ॥
सत्त नाम सतपुरुष अपारा। चौथे मांहि करें दरबारा ॥
सुरत शब्द मारग कोई गावे। सो हंसा चढ़ लोक सिधावे ॥
सो मारग अब राधास्वामी गाई। कोई कोई प्रेम भक्ति से पाई ॥

मैं अपने आप से पूछता हूं कि ऐ फकीर ! गुरु कौन है और गुरु क्या देता है ? मेरे निज अनुभव में जो आया है मैं वह कहता हूँ। गुरु नाम है ज्ञान का, समझ का और विवेक का। यह समझ बूझ कहाँ से मिलती है ? यह किसी ऐसे पुरुष से मिलती है जो प्रकृति का ज्ञाता हो, जिसकी समस्त वृत्तियां अर्थात् शारीरिक, मानसिक और आत्मिक एक सम अवस्था में रहती हैं। इसका नाम है स्थितप्रज्ञ। (बुद्धि का सम अवस्था में रहना ही स्थित-प्रज्ञ की अवस्था है।) ऐसा पुरुष जब कोई सम्मति देगा, वह दूसरे के हित के लिये देगा। ऐसा पुरुष भेद बताता है लेकिन तुम इसकी ओर तो ध्यान नहीं देते किन्तु धन सम्पति पुत्र पोते माँगते हो। दुनिया में यश और मान माँगते हो अर्थात् सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति चाहते हो। क्या मैं आपसे पूछने के लिये विवश नहीं हूँ कि क्या संत बीमार नहीं हुये ? क्या उनके पुत्र और पोते नहीं मरे ? तुम देखो कि हुजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज

अन्तिम जीवन में कितने बीमार हुये। स्वामी रामकृष्ण परमहंस कैंसर के रोग में ग्रस्त रहे। परमसंत कबीर साहब अन्तिम आयु में ११ वर्ष दर्द गुर्दा से बीमार रहे। संत तुलसीदास जी भी बहुत बीमार रहे। यदि ऐसे महापुरुष दूसरों के सांसारिक कष्ट दूर करने की सामर्थ्य रखते थे तो वह क्यों न अपना कष्ट दूर कर लेते। यह तो कर्म का चक्र है जिसे सबको भोगना पड़ता है। कोई भी इसके प्रहार से नहीं बच सकता।

कर्म प्रधान विश्व कर राखा।
जो जस कीन्हसु तस फल चाखा॥

इसलिये मैं कहता हूँ कि अपने कर्म को ठीक रक्खो। शुभ कर्म करो और अपनी नीयत को शुद्ध रक्खो। मैंने जब देखा कि जब ऐसे महापुरुष भी इस कर्म के चक्र से न बच सके तो मैं डर गया कि पता नहीं अन्त समय मेरी क्या दशा हो। इसलिये जो पिछले कर्म किये हुये हैं वह तो भोगने ही पड़ेंगे मगर भविष्य के लिये तो ऐसे कर्म किये जांय जो दुखदाई न हों। तुम लोग यहाँ आये हो। यदि दुनियां की वस्तुयें माँगने के लिये आये हो तो यह सब वस्तुयें तो तुम्हारे अपने ही विश्वास से मिलेंगी। यदि यह तुमको मिल भी जायें तो क्या हमेशा यह तुम्हारे साथ रहेंगी? मुझे तो यह रहस्य वर्षों की खोज के बाद मिला। सन् १९०५ ई० में जब में इस मत में आया था तो मैंने प्रण किया था कि जो कुछ मेरा अनुभव होगा वह सँसार को बता जाऊँगा। इसलिये आज निर्भय होकर यह संदेश दिये जा रहा हूँ कि ऐ मानव! तू जिस वस्तु की कभी कहीं और कभी कहीं खोज करता फिरता है वह तेरे अपने ही अन्तर में है। जब भी मिलेगी अन्तर से मिलेगी।

जब से तुम लोगों से यह पता चला कि मेरा रूप तुम्हारी सहायता करता है और मैं नहीं होता तो वह तुम्हारा विश्वास होता है। मगर हम महात्मा लोग इसको पर्दे में रखकर तुम लोगों से अनुचित रूप से धन, मान और यश लेते हैं। यह वह रहस्य है जो मैं तुमको देना चाहता हूँ कि बाहर से कोई राम, कृष्ण या कोई गुरु तुम्हारी सहायता के लिये नहीं

आता। मैंने भी तुम्हारी तरह बहिर्मुखी होकर इनको पूजा है क्योंकि मैं भी यह समझता था कि यह सब बाहर से आकर दर्शन देते हैं लेकिन आज आप मुझे यह कहते हैं कि बाबा आप अमुक आदमी को मरते समय लेने पहुँचे, मुझे नदी से डूबते हुये बचाया, परीक्षा में मेरा पर्चा हल कराया, मेरी टांग पर पड़े हुये भारी पत्थर को हटा दिया, बीमारी में मुझे दवा बताई जिससे मैं निरोग हो गया, देश देशान्तर में प्रगट होकर अनेक लोगों को दर्शन देकर कृतार्थ किया। जब मैं यह जानता हूँ कि मैं जिन्दा किसी के अन्तर नहीं गया और न मुझे इन घटनाओं की जानकारी है तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्तर भी जो रूप प्रगट होते थे, जिनको मैं किसी समय सत्य मानता था और जिनको मैं मालिक समझा करता था वह वास्तव में थे नहीं मगर भासते थे। वह एक भ्रम निकला और मेरी अज्ञानता दूर होगई और मैं आगे खोज करने के लिये विवश हो गया। मेरा रूप या किसी गुरु का रूप जो कि वास्तव में तुम्हारा अपना ही विश्वास होता है यह होता नहीं लेकिन तुम्हें भासता है। तुम उसको सत्य मानकर लुट जाते हो। मैं इस भेद या रहस्य को प्रगट करने के लिये आया हूँ ताकि तुम्हारा भ्रम दूर हो जाय जैसे कि मेरा हुआ।

यह आदमी बम्बई से आया है। यह कहता है कि आपने मुझे बम्बई में दर्शन दिये। अब इसने मानवता मंदिर में ५००) रु० दिये हैं। यदि मैं इसको स्पष्ट रूप से नहीं कहता तो यह रुपया मंदिर के नाश का कारण होगा। चूंकि मैंने स्पष्ट वर्णन कर दिया इसलिये अब वह ज्ञान से जो इच्छा हो देदे, इसका कोई दोष नहीं हैं।

मैं यह रहस्य क्यों खोलता हूँ ? इसलिये कि जब आप लोगों की कृपा से मेरा भ्रम मिट गया और मैं अपने असली रूप को ढूंढ़ने को विवश हुआ तो तुम भी मेरी तरह असलियत की ओर ध्यान देकर इन सब बाहरी रूपों और रंगों को जो वास्तव में हैं नहीं और अज्ञान वश भासते हैं, इनसे बच जाओ। मैं कहता हूँ कि तुम बच जाओगे।

अब आप पूछोगे कि वह असलियत या सतपद क्या है ? वह है पारब्रह्म और शब्दब्रह्म अर्थात् प्रकाश और शब्द । गायत्री मंत्र में भी यह कहा गया है कि सब कल्पनाओं को छोड़कर अपने अन्तर सावित्री रूपी सूर्य के दर्शन करो । वह तुम्हारी बुद्धि का प्रेरक होगा । गायत्री मंत्र के केवल अक्षरों के जाप करने से प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता जब तक कि कोई देह, मन और आत्मा को छोड़कर अपने अन्तर प्रकाश को प्रगट न करे । इस रहस्य को केवल वह समझेगा जिसको असलियत या सत वस्तु की खोज है । आप लोगों को तो धन दौलत, मान और यश की आवश्यकता है । जब हमने शब्द को सुना और प्रकाश को देखा तो फिर क्या हुआ ? इनके ज्ञान से स्वर्ग नर्क का भ्रम मिट गया । नर्क और स्वर्ग क्या है ? दुनियां इसके चक्र में घूम रही है । बुरे कर्मों का फल जो तरह-तरह के दुख हम भोगते है, नर्क है और अच्छे कर्मों का फल अर्थात् सुख और आनन्द जो हम महसूस करते हैं, स्वर्ग है । हम कभी खुशी कभी सुख और कभी दुख के चक्र में घूमते रहते हैं और छुटकारा नहीं मिलता । इन दुख और सुखों का मूल क्या है ? यह है तुम्हारे अपने ही मन में क्योंकि तुमने अपने ही मन की कल्पना से बुरे और अच्छे विचार उत्पन्न किये हैं और इन्हीं में फंस गये हो । जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी करनी वैसी भरनी ।

पिछले वर्ष तुमने मुझे कहा था कि आपने शादी की तारीख बदल देने को कहा लेकिन मैंने नहीं कहा । यदि मैं तुम लोगों को सचाई वर्णन न करूँ और तुम लोगों को लूटकर खाजाऊँ तो कर्म के फल से नहीं बच सकता । क्या भगवान कृष्ण ने जो विष्णु और ब्रह्म के अवतार माने जाते हैं, कौरव पाण्डवों को बचा लिला ? इसलिये मेरा मार्ग है कि ऐ मानव ! तू अपनी नीयत को शुद्ध रख, किसी से हेरा फेरी मत कर । यदि दो भाई शामिल कारबार करते हो तो एक दूसरे से कपट न करो, द्रोह मत करो वरना तुम्हारी ही बदनीयती तुम्हारे लिये दुखदायक सिद्ध होगी और कुल कारबार फेल हो जायगा । इसलिये मैं तो डर गया कि यदि हेरा फेरी करूँगा तो कर्म के फल से नहीं बच सकूंगा ।

मेरे प्रशाद से यदि किसी के बच्चा हो गया या कोई निरोग हो गया तो यह सब उसके अपने ही विश्वास के कारण हुआ। मैंने तो कुछ नहीं किया। बेशक मेरे स्पष्ट वर्णन से मेरा मण्डल या समाज नहीं बढ़ता लेकिन मैं इसको बढ़ाकर क्या करूँ। क्या बढ़े हुये मण्डल साथ जायेंगे? संसार में पहिले ही बहुत से मंडल या समाज बढ़े हुए हैं। क्या इन बढ़े हुए मंडलों ने जीवों के भ्रम दूर कर दिये और वह स्वतन्त्र हो गये? कदापि नहीं! वह तो अधिक फंसाव में आ गये हैं। अलग-अलग सम्प्रदाय बन गये और मनुष्य जो आपस में प्रेम का जीवन व्यतीत करने आया था, वह ईर्ष्या, द्वेष और मत्सर का शिकार हो गया। वास्तव में सांसारिक समस्यायें हल करने का तो मनुष्य का अपना ही विश्वास है इसी विश्वास को बाहर से आने वाला और दर्शन देने वाला समझा गया। जिसका राम पर विश्वास था उसने उसको राम समझा। जिसने कृष्ण पर विश्वास रक्खा उसने उसको कृष्ण समझा। इसी कारण मानव वंश आपस में बट गया। कोई राम का, कोई कृष्ण का कोई मुहम्मद साहब का, कोई वाह्य गुरु का और कोई किसी गुरु का भक्त बन गया। सब एक दूसरे को पृथक-पृथक समझने लग गये। वास्तव में विश्वास तो एक ही था और इसी ने हमको अलग-अलग बाँट दिया। फल तो हमको अपने हमारे अपने विश्वास से मिला लेकिन हमने यह समझ लिया कि फल देने वाला कोई बाहर से आता है।

इस दशा को देखकर कुदरत ने मेरे दिमाग को हिलाया और इस भेद को खोलने के लिये विवश किया। आप मुझे अहंकारी कहें लेकिन मैं हूँ संत सतगुरु वक्त। आपको वर्तमान परिस्थिति के अनुसार सच्चा ज्ञान दे रहा हूँ। सच्चे सत्गुरु की भी यही ड्यूटी है। सतगुरु का अर्थ भी यही है कि वह सच्चा ज्ञान दाता है और सच्ची बात कहता है। काम तो सबका अपना विश्वास ही करता है लेकिन हर एक आदमी उस काम को करने वाला बाहर से आया हुआ अपना इष्ट मानता है, यद्यपि बाहर से कोई किसी के अन्दर आकर उसका काम नहीं करता। अब मैं अपने आपसे प्रश्न करता हूं कि ऐ फकीर! क्या तुम रुपया इकट्ठा करने के लिये आये हुए हो? नहीं! मैं

भेद और कुन्जी देने के लिये आया हूँ। आप देखो रात को स्वप्न में सांप आ जाता है, शेर आ जाता है या चोर आ जाता है और तुम घबरा जाते हो। यदि कोई सुन्दर दृश्य आ गया तो तुम प्रसन्न हो जाते हो। जब तुम जागते हो तो तुम्हें मालुम होता है कि वास्तव में यह तो कुछ भी नहीं था किन्तु स्वप्न था। तुमने स्वप्न में उसको सच्चा मानकर सुख और दुख उठाया। इसी तरह अभ्यास में जो रूप रंग भासते हैं जो वास्तव में हैं नहीं और जब तक तुम उनको सत्य मानोगे तुम्हारा आवागवन समाप्त नहीं होगा। देखो तुम आगरा के सत्संगी हो। हुजूर महाराज ने अपनी 'प्रेम-बाणी' नामी पुस्तक में लिखा है कि अन्त समय में फिल्म चलती है। उस समय तुम्हें अपने गुरु के दर्शन भी होंगे, शब्द भी सुनाई देगा किन्तु इतना होने पर भी तुम्हारा आवागवन से छुटकारा नहीं होगा, क्योंकि अभी तक तुम द्वैत के मण्डल में हो। जब कोई संत सतगुरु दुनियां में प्रगट होगा वह बाकी कमाई (अर्थात् हर एक से चित्त को हटाने की) पूरी करायेगा। तब वह जीव अपने निज घर जायेगा। यह भेद आप लोगों से मिला। दूसरे महात्माओं ने सच्ची बात नहीं बताई। तुम देखो कि जब पाकिस्तान बना तो मुसलमानों ने हजरत अली का नारा लगाकर हिन्दुओं को कत्ल किया और हिन्दुओं ने हर हर महादेव आदि का नारा लगाकर मुसलमानों को कत्ल किया। यह हजरत अली और हर हर महादेव बाहर से नहीं आये थे। यह तो लोगों की अपनी कल्पना और विश्वास ही था जिसके कारण यह दो अलग-अलग मजहब बन गये। सबके अन्तर एक ही तत्व है और वह है प्रकाश और शब्द। जब तक किसी को इस परम तत्व अर्थात् शब्द और प्रकाश का ज्ञान (जो इसकी अपनी कमाई पर निर्भर है) नहीं होता तब तक आवागवन का चक्र समाप्त नहीं होता। मुझे यह रहस्य ज्ञात हो जाने से मेरा मन भौंरा बन गया और सच्चे गुरु का प्रेमी हूँ। सच्चा गुरु है शब्द और प्रकाश। शब्द उसका रूप है और प्रकाश उसके चरण हैं। अब में केवल इन दोनों का साधन करता हूँ। कर्म का फल तो मुझे भी भोगना पड़ता है इसलिये अपनी नीयत को शुद्ध रखने की कोशिश करता रहता हूँ

और आप लोगों को कहता रहता हूँ कि शुभ कर्म करो। अपनी नीयत शुद्ध रक्खो ताकि तुम दुख और कष्ट से बच सको।

रहा आवागवन से छुटकारा, वह तो केवल उन लोगों का होगा जिनको अपने असली घर जाने की उत्कंठा है और सच्चे मालिक से मिलने की तीव्र इच्छा है। जो धन, स्त्री, सम्पति और सन्तान को मालिक परम तत्व के अर्पण करके उससे प्रेम करेंगे, वह उसमें लीन हो सकते हैं। यही जीवन का उच्चकोटि का ध्येय होना चाहिये। मैं किसी को फूंक नहीं मार सकता। जिसने अमल किया उसका काम बन गया। जिसने नहीं किया वह रह गया। यदि कोई मेरा चेला बनकर खोटे कर्म करेगा या किसी के साथ हेरा फेरी करेगा तो वह उस कर्म के फल से बच तो सकेगा नहीं किन्तु इससे मेरी भी बदनामी होगी। दुनियां में अच्छे और बुरे कर्म नीयत पर निर्भर हैं इसलिये नीयत को साफ रक्खो और अपना जीवन बनाओ।

यह सत्संग विशेष रूप से बम्बई और आगरा से आने वालों के लिये है। मैं कहता हूँ कि केवल एक को मानो, चाहे राम को चाहे देवी को, चाहे अल्लाह को, चाहे गुरु को। अपने अन्तर में उसका रूप बनाओ। सांसारिक उन्नति के लिये अन्तर में रूप बनाना परमावश्यक हैं। आप देखिये मैस्मरेजिम वाला क्या करता है? वह दीवार पर एक काला निशान बना लेता है और फिर उसका ध्यान करता है। उसके ध्यान की शक्ति से वह काला निशान जब चमेली या कोई और फूल बन जाता है तो उस समय उस आदमी में बड़ी शक्ति आ जाती है। इसलिये मैं कहता हूँ कि अपनी ध्यान शक्ति को बढ़ाओ। इससे तुम्हारे सांसारिक काम हो जायेंगे, लेकिन आवागवन से छुटकारा चाहते हो तो शब्द और प्रकाश का साधन करो।

सूक्ष्म दृष्टि

(ले०—महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज)

आज हम सूक्ष्म दृष्टि को नया अर्थ दे रहे हैं। सूक्ष्म दृष्टि का प्रयोग इस लेख में बिल्कुल शाब्दिक अर्थ में किया जाता है। इसलिये हमारे पाठकों को ख्याल रखना चाहिए।

मनुष्य का आत्मा तीन शरीरों से ढका हुआ है जिनको स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर कहते हैं। इन्हीं तीन शरीरों के लिहाज से मनुष्य की दृष्टि में अन्तर होना चाहिये। स्थूल शरीर यह देह है जो दिखाई देती है जिसके पालन के निमित्त सब लोग रात दिन परिश्रम करते रहते हैं। एड़ी से चोटी तक जो कुछ तुम देखते हो इसके अन्दर जो हड्डी, मास, रक्त, नस नाड़ी आदि दृष्टिगोचर नहीं होते। वह भी स्थूल शरीर है। सूक्ष्म शरीर सूक्ष्म तत्वों से बना हुआ इसके अन्दर है। जो दशा स्थूल शरीर की है वही सूक्ष्म शरीर है। जो कुछ इसमें है वही उसमें भी है। जो इन्द्रियां आदि यहाँ हैं वही वहाँ भी हैं। अन्तर केवल इतना है कि यह स्थूल है वह सूक्ष्म है। वह इसके अन्दर छिपा हुआ संक्षेप में स्थूल शरीर सूक्ष्म शरीर का बाहरी खोल है मगर यह बाहरी खोल इस तरह का नहीं है कि जैसे कोई व्यक्ति अपने शरीर पर वस्त्र पहिन लेता है किन्तु सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर में ओत प्रोत है और यह उसी की स्थूल छाया है जो साथ रहती है और मरने के समय नष्ट हो जाती हैं। सूक्ष्म शरीर नहीं मरता। यह मोक्ष की दशा में मरता है और फिर मरा हुआ दुबारा जीवित नहीं होता। कारण शरीर सूक्ष्म शरीर के अन्दर रहता है उसमें वह सब सामान मौजूद रहते हैं जो सूक्ष्म शरीर में आकर बढ़ते हैं और बीज रूप से फिर कारण का कारण बना रहता है जैसे बेर के वृक्ष को तुम बराबर जितनी बार चाहो छांटते चले जाओ, उसका कारण अंग जड़ में रहता है और अवसर पाकर उगता, फूलता और फलता रहता है ठीक उसी तरह कारण शरीर की भी दशा है यद्यपि उसका समझना और समझाना किसी अंश तक कठिन है।

जिस तरह बेर के वृक्ष के पत्ते व कोंपल छाँटने से नई शाखें निकलती रहती हैं वैसे ही इस सूक्ष्म और कारण शरीर से पैदा हो होकर मरता रहता है स्थूल शरीर की मृत्यु यद्यपि अन्तिम समय में दिखाई पड़ती है मगर सचाई यह है कि इसमें से तत्वों का मल हर समय निकलता रहता है। यह मल नित्य प्रति साफ करने से दूर भी हुआ करता है। यदि यह दूर न किया जाय तो शरीर पर मैल के रूप में बाहर आयेगा जिसमें विशेष प्रकार की दुर्गन्ध होती है। उसकी पहिचान मनुष्य के पेशाब और शरीर के सूँघने से की जाती है। मल प्रतिक्षण निकला करता है यहाँ तक कि यदि अपने हाथ की दो उँगलियों को एक दूसरे से मिलाकर झटका दो तो उसका बहुत बड़ा अंश उसी समय नीचे गिर पड़ेगा और यदि अंगारे में तुम दोनों पंजों को मिलाकर झटका दो तो उसका कुछ अंश आग में गिरेगा और दुर्गन्ध करने लगेगा क्योंकि जो वस्तु निकलती है वह पृथ्वी का अंश है। और पृथ्वी में गन्ध होता है। गन्ध उसका गुण है। किसी-किसी जानवर में इस गंध के सूँघने की विशेष पहिचान होती है। तुम किसी दिशा को चले जाओ। सुराग लगाने वाले मनुष्य तुम्हारा पता न पावेंगे लेकिन तुम्हारे कुत्ते को तुरन्त पता लग जायगा क्योंकि उसमें इस मल के सूँघने की विशेष शक्ति है। चलते समय जो मल राह में तुम्हारे शरीर से निकलता गया है वह उस कुत्ते को तुम्हारे पास तक पहुंचने में सहायता देगा और वह तुम्हारा पता लगा लेगा बशर्ते कि वह सूक्ष्म मल (गुबार) किसी और मल से ढक न गया हो। हर वस्तु की गंध में विशेषता होती है। एक मनुष्य के शरीर की गन्ध दूसरे से नहीं मिलती। यही कारण है कि कुत्तों को अपने मालिक की खोज में इतनी सहूलियत होती है। यह मल जो तुम्हारे शरीर से निकला करता है, चमकते हुये रूप में निकलता है जिस तरह घर के अन्दर जब सूर्य की कोई किरण जाती है तो तुम देखते हो कि उसमें प्रकाश रहता है और धूल के कण इसमें खेलते हुए दिखाई पड़ते हैं ऐसे ही तुम्हारे शरीर के चारों ओर इन कणों की दशा होती है। वह अपनी दशा के अनसार प्रकाशवान रहते हैं लेकिन हमको और तुमको इस कारण दिखाई

नहीं देते क्योंकि हमारी और तुम्हारी दृष्टि बहुत स्थूल हो गई है। लेकिन कुत्तों को और बहुत छोटे बच्चों को यह दिखाई पड़ सकते हैं क्योंकि उनकी दृष्टि अपेक्षाकृत सूक्ष्म होती है। तुमने प्राय: महात्माओं के सिर के चारों ओर आभा देखी होगी। यह आभा उसी उड़ते हुए मल के कारण है। यदि ध्यान दिया जाय तो सत्पुरुषों के सिर के गिर्द यह प्रकाश मिलेगा। इस पर सन्देह करने की आवश्यकता नहीं है। यह एक तरह का प्राकृतिक नियम है और यह गुण न केवल चन्द्रमा, सूर्य और तारागणों में हैं किन्तु हर वस्तु और हर जीवधारी में इसकी सूक्ष्मता और स्थूलता के लिहाज से दिखाई पड़ेगी। जो वस्तु जितनी अधिक सूक्ष्म होगी उसके मल में उतनी अधिक चमक होगी।

यह उपरोक्त वर्णन स्थूल शरीर का है। स्थूल सूक्ष्म शरीर में जो प्रत्यक्ष अन्तर है वह यह है कि उसके कण अपेक्षाकृत घनी शकल के होते हैं। सूक्ष्म शरीर के बारीक और बिखरे हुए दिखाई आते हैं अन्यथा जो बाहर है वही अन्तर है। इसमें और उसमें तनिक भी अन्तर नहीं है।

हमारे देखने की दृष्टि इन्हीं शरीरों के लिहाज से होती है। यदि हम बिल्कुल स्थूल हैं तो हमारी दृष्टि बहुत मोटी होगी। सिवाय मोटी वस्तुओं के हम किसी और को न देख सकेंगे। जैसी जो वस्तु हो उसके देखने को आँख भी वैसी ही होनी चाहिये। जागते समय हमारी आँख स्थूल शरीर में रहती है। स्वप्न देखते समय सूक्ष्म शरीर में रहती है और गहरी या सुषुप्ति में कारण शरीर में जाकर ठहर जाती है।

यहाँ तक तो हर एक व्यक्ति कुछ न कुछ समझ सकता है यद्यपि इस बात का विश्वास करना कि इन दशाओं में हमारी दृष्टि बदलती रहती है सहज बात नहीं है। फिर भी इतना तो हर आदमी जान सकता है कि सोते समय यह आँखें बन्द रहती हैं मगर अन्दर हीं अन्दर स्वप्न देखते समय कुछ न कुछ दिखाई अवश्य आता है। यह केवल ख्याल नहीं है बल्कि तथ्य है। जिस दृष्टि से स्वप्न की घटनायें देखी जाती हैं इसको हम सूक्ष्म

दृष्टि कहते हैं क्योंकि वहाँ उस समय आत्मा केवल सूक्ष्म शरीर में रहता है। स्थूल शरीर में उसकी छाया मात्र होती है।

यदि कोई व्यक्ति चाहे कि यह सूक्ष्म दृष्टि इसको जाग्रत अवस्था में भी प्राप्त हो तो उसको यह साधन करना पड़ेगा कि जागते हुए भी सूक्ष्म शरीर में टिकने का यतन सीखे। यह उपाय भिन्न-भिन्न प्रकार के आध्यात्मिक साधनों से सम्बन्ध रखता है और हमेशा सोच विचार और चिन्ता करने से भी हो जाती है। जो साधन करते हैं उनकी तो प्रत्यक्ष में आंख ही कुछ ऐसी बन जाती है कि प्रायः दुनियां की सूक्ष्म घटनायें स्वयं दिखाई पड़ने लगती हैं। उनकी आंखें एक तरह पर चढ़ी हुई होती हैं जैसे नशा बाजों की होती है और आकाश मण्डल में गति करने वाली रूहें दिखाई आने लगती है। जो साधन नहीं करने, केवल सोच विचार वाले होते हैं उसके अनुभव की दृष्टि खुल जाती है जो स्वयं सूक्ष्म दृष्टि है मगर नौयत के लिहाज से कुछ अन्तर रखती है। यहाँ एक मण्डल के लोगों में स्थूल दृष्टि और सूक्ष्म दृष्टि के जो शब्द प्रयोग करेंगे वह भवकी दृष्टि और अनुभव की दृष्टि हैं। पहिली दशा में खुली हुई आँखों से देखा जाता है। दूसरी दशा आत्मा पर अक्स पड़ता है जिसको वह शब्दों में वर्णन किया करता है। अनुभवी दृष्टि और सूक्ष्म दृष्टि में केवल इतना अन्तर है।

सूक्ष्म दृष्टि अनुभवी दृष्टि की अपेक्षा साधक के लिये कुछ हानिकर भी होती है क्योंकि सम्भव है कि वह इसको सिद्धि समझकर उसके लपेट में आ जाये मगर अनुभवी दृष्टि से इतनी हानि नहीं होती। दशा दोनों की समान है।

॥ संत वाणी ॥

१, मैं कौन हूँ ? कहाँ से आया हूँ ? कहाँ जाऊँगा ? क्या करना चाहिये ? क्या कर रहा हूँ ? इन प्रश्नों का बार-बार विचार करो।

२. अशान्त वातावरण में आत्म चिन्तन नहीं हो सकता।

३. कहो मत करो।

४. जो देगा उसे मिलेगा। जो लेगा उसे देना पड़ेगा। इससे बचाव नहीं।

गजल

दयालस्वरूप पीरेमुगां साहब, देहली

ख्याल को ख्याल से, ख्याल देना आसान नहीं ।
मुजस्सिम ख्याल जो, खयाल को बयान नहीं ॥
जुजवीयत और कुल्लीयत, सब ख्याल में समा गये ।
ख्याल को वाजै करे, ख्याल को जुबाँ नहीं ॥
जिसको समझा है खुदा, ख्याल ने ही समझा है ।
क्या तसव्वर में तुम्हारे, ख्याल का सामान नहीं ॥
ख्याल ही जफा वफा, ख्याल ही दगा दुआ ।
कौनसा शैतान पिनहा, जिसमें रहमान नहीं ॥
जब तलक रहमान है, तब तलक शैतान है ।
ख्याल जब गायब हुआ, रहमान व शैतां नहीं ॥
ख्याल ही तो सब कुछ है, पर सब कुछ, कुछ नहीं ।
क्या समझते हो कि कोई, ख्याल का निगहाँ नहीं ॥
ख्याल की हैं सूरतें जिन्दगी और मौत है ।
आना जाना फिर कहां, जो ख्याल अयां निहाँ नहीं ॥
बन्दये मजहब बना, बन्दये खुदा न बना ।
मानाकि शकलेये इंसान, सीरत इंसान नहीं ॥
मय मस्ती को जो पिये, ओज में धन माल को ।
सभी कहते नकली है, असली 'पीरेमुगां' नहीं ॥

सत्संग

परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

(मानवता मन्दिर होशियारपुर, ता० २१—७—७० ई०)

सत्संग में यह शब्द पढ़ा गया :—

अरे कोई समझो रे नर ज्ञान, गगन में आवाज कैसी है ।
बिन धरती एक मन्दिर देखा, बिना सरोवर पानी ।
बिना दीपक इक चमक चाँदनी, जोत में जोत समानी ॥ गगन में....
जग में आया पढ़ा लिखाया, तेरी सुरता नहीं मिटानी ।
ईड़ा पिंगला सुसुमना नाड़ी, तिरकुटी बाँध निशानी ॥ गगन में....
गगन मंडल बिच अमृत कुँआ, जहाँ ब्रह्म का बासा ।
सगुरा होवै सो भर भर पीवे, निगुरा मरे पियासा ॥ गगन में....
गगन मंडल दो पक्षी बैठे, एक गुरु एक चेला ।
चेला रहा सो चुन चुन खाया, गुरू निरन्तर खेला ॥गगन में....
गगन मंडल बिच गऊ बियानी, धरती दूध जमानी ।
माखन माखन संतों खाया, छाछ जगत बरतानी ॥गगन में....
कहें कबीर सुनो भई साधो, यह पद है अलबेला ।
जो कोई इसका अर्थ लगावै, वही गुरु हम चेला ॥गगन में....

मैं गुरु पूर्णमा पर दो सत्संग दे चुका हूँ । चाहता हूँ कि मैं इनको प्रकाशित करादूँ । क्यों ? मैं नाक कटों में शामिल नहीं हूँ । न संतों की हाँ में हाँ मिलाता हूँ, न वेदों और शास्त्रों का खंडन मंडन करता हूँ । अपनी खोज का परिणाम बताता हूँ । इन्सान के अन्दर एक विवेक शक्ति पैदा होती है जिसको बुद्धि कहते कहते हैं । यह बुद्धि कैसे पैदा होती है ? वह जो वस्तु अन्तर में रहने वाली है जब वह किसी बाहरी वस्तु को देखती है तब उसके अन्तर बुद्धि पैदा होती है । मैं जब होश में आया, दुनियां को देखा तो सवाल पैदा हुआ कि इसके बनाने वाला कोई होगा । उसकी तलाश

हुई। जिस प्रकार के संस्कार मुझको या दूसरे आदमियों को बचपन से मां बाप से, सुसाइटी या किताबों से मिलते हैं उस प्रकार की उसके अन्तर बुद्धि पैदा होती है। इस तरह से हिन्दू धर्म के संस्कारों से प्रभावित होकर कि मालिक अवतार लेता है, मेरे दिल में भी इस दुनियां के पैदा करने वाले का जहाँ से यह रचना हुई है, ख्याल आया। और मेरा यह ख्याल एक दृश्य के द्वारा दातादयाल के चरणों में मुझे ले गया। मैं अपने विश्वास से उनको मानता रहा, प्रेम करता रहा और आनन्द लेता रहा।

उन्होंने यह कबीर मत, राधास्वामी मत और सन्त मत का संस्कार दे दिया, उनकी बाणियाँ पढ़ी। भावना पैदा हुई जैसा इस कबीर ने लिखा है :—

अरे कोई समझो रे नर ज्ञान, गगन में आवाज कैसी है।

कबीर ने या दूसरे सन्तों ने या उपनिषदों के ऋषियों ने बाहर के संस्कारों से ख्याल लेकर मेरी तरह उस मालिक की तलाश की। तो वह मूर्त्ती पूजा, साकार पूजा, निराकार पूजा, को छोड़ गये। उपनिषदों के ऋषि क्यों छोड़ गये ? यह तो उनको पता होगा। मैंने कैसे छोड़ा ? यह मैं इस गुरु पूर्णमां पर वर्णन करता हुआ आ रहा हूँ। जब मुझे यह निश्चय हो गया कि मैं तो किसी के अन्तर जाता नहीं, न जागृत में और न स्वप्न में और न समाधि में, तो क्या मेरी बुद्धि इस बात को मानने के लिये तैयार नहीं होती कि भई तू तो निकला था मालिक को मिलने के लिये और यह देखने के लिये कि इस दुनियां को बनाने वाला कौन है ? तू तो उसको ही मानता था कि जो तेरे सामने साकार रूप में आ गया या निराकार रूप में आ गया तो इस साकार और निराकार को बनाने वाला तो मेरा अपना ही मन था। मेरा अपना ही विचार था। मुझे इस विश्वास का आना लाजिमी था और हो सकता है कि यही विश्वास ऋषियों को भी हुआ हो, फिर वह अपनी तलाश में अपने अन्तर चले हों। इसके बाद जो अनुभव मुझको हुआ शायद यही अनुभव इन सन्तों या उपनिषदों के ऋषियों को हुआ हो। मगर उन्होंने उस अनुभव को इस तरह से वर्णन नहीं किया

जिस तरह से मैंने कहा। ऋषियों ने या सन्तों ने यह वर्णन नहीं किया कि वह अन्तर में आवाज की तरफ क्यों गये, मगर मैं कहता हूँ कि मैं क्यों गया। क्योंकि मैं भी तो साकार के पूजने वाला था, साकार के रूप को मानता था निराकार के रूप को मानता था। तो साकार के मानने वाली भी मेरी ही बुद्धि थी और निराकार के मानने वाली भी मेरी ही बुद्धि थी। जब से यह अनुभव हुआ कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता और मैं चूंकि मालिक को मिलना चाहता था तो अपने अन्तर धँसने के लिये मजबूर हुआ। अन्तर में प्रकाश था या शब्द था। कबीर ने तो यह कह दिया :—

अरे कोई समझो रे नर ज्ञान, गगन में आवाज कैसी है।

जिस तरह से मैंने यह समझा कि लोगों के अन्तर मेरा रूप प्रकट होता है मगर मैं नहीं होता, तो मैं यह यकीन करने के लिये मजबूर हो गया कि जो रूप मेरे अन्तर प्रकट हुये चाहे दातादयाल हुए या कोई देवी हुई या कोई और दृश्य हुआ यह तो मेरा अपना ही ख्याल और संस्कार था, इसलिये में अपने अन्तर जाने के लिये मजबूर हो गया। अन्तर शब्द था। तो जिस तरह मैं इन रूपों को समझने के लिये विवश हुआ ऐसे ही मैं इस शब्द को सुनने के लिये विवश हो गया कि यह शब्द है क्या ? क्या मैं सोचने के लिये विवश नहीं था। मैं ही मजबूर नहीं हुआ, कबीर भी मजबूर हुआ। हर एक आदमी जो जिज्ञासू है, सच्चाई पसन्द है तो जब एक बात का उसको अनुभव हो जाता है तो वह उससे आगे जाने के लिये विवश हो जाता है। यह इन्सान की बुद्धि का स्वभाव है।

यह इन्सान के अन्दर जो एक विवेक शक्ति है वह हँस की तरह है छानने की शक्ति है। वह आगे जाने के लिये मजबूर करती है। शब्द के बारे में कबीर का क्या भाव है, वह तो कबीर जानते होंगे, मैं नहीं जानता। मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा। इसलिये मुझको जो भाव मालुम हुआ कि वह शब्द क्या है, वह कहता हूँ। हमारे दिमाग के अन्तर हमारी जो जिन्दगी हैं, हमारा जो अस्तित्व है "उस अस्तित्व के

दुनियां नाम-नाम चिल्लाती है। इस नाम के पीछे और शब्द योग के पीछे करोड़ों आदमी पड़े हुए हैं। करोड़ों आदमी साकार के और करोड़ों निराकार के पीछे पड़े हुए हैं और करोड़ों ही ऐसे हैं जो न साकार की परवाह करते हैं और न निराकार की, वह इस दुनियां को। सत्य मानकर दुनियां में ही खुश हैं। "खाओ पीओ और मौज उड़ाओ।" अब मैं यह सोचता हूँ कि शायद मुझसे यह अच्छे हैं जिन्होंने यह खोज नहीं की। यह सोच एक सरदर्दी है, मुसीबत है और यह दुःख का कारण है।

जानवर, कीड़े मकोड़े, इन्सान यह सब उस मालिक की रचना है। करोड़ों पैदा होते हैं और मर जाते हैं। उनको न पैदा होने की खुशी है और न मरने का ग़म है और न यह सोचते हैं। केवल यह इन्सान का जीवन है जिसमें बुद्धि है और विवेक है। इसलिये इन्सान बुद्धि और विवेक के ख्याल से सब रचना से बड़ा माना हुआ है। इस दृष्टि से यह बड़ा है। कबीर ने कह तो दिया :—

अरे कोई समझो रे नर ज्ञान, गगन में आवाज कैसी है।

मैं यह समझता हूं कि यह आवाज कैसी है? यह जो मेरा अस्तित्व है और मेरे अन्तर मेरा "मैं पना है" यह उसकी हरकत (गति) की आवाज है। संत इसको निज नाम कहते हैं। "यही नाम निज नाम है मन अपने धरले।" वह हमारा अपना ही नाम है। हमारे अस्तित्व की आदि गति का नाम है। जिस तरह कि साकार रूप मेरे अन्तर पैदा होता था वह मेरे अपने ही मन का ख्याल था। निराकार भी मेरे अपने ही मन का ख्याल था। इसी तरह प्रकाश भी मेरे अपने ही अस्तित्व का रूप है और जो यह आवाज आती है यह भी मेरे अपने ही अस्तित्व का रूप है। कबीर ने तो कह दिया :—

"अरे कोई समझो रे नर ज्ञान, गगन में आवाज कैसी है।"

तो कबीर कहता है कि अरे भाई तू सोच! तेरे अन्तर जो आवाज होती है यह कैसी है? **मैंने** क्या समझा? यह जो नाम नाम नाम दुनियां लेती फिरती है और जिस नाम के लिये आज लाखों शास्त्रें हैं

की, वह नाम है क्या ? वह हमारे अपने ही अस्तित्व 'है पना" की आदि गति का नाम "नाम है ।" मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि ऐ फकीरचन्द ! तुमको जो मालिक के मिलने की धुन थी, तो उस नाम के सुन जाने से क्या वह मालिक तुमको मिल गया ? यह एक सवाल है जो मैं अपने आपे से पूछता हूँ । अगर उस शब्द के सुन जाने से फिर मुझे किसी और चीज की तलाश न होती तो फिर तो मैं मान लेता कि इस नाम के सुनने से मुझे मालिक मिल गया मगर उस नाम के सुनने के बाद भी खोज बाकी रही । यह और बात है कि इन्सान समझे नहीं और किसी एक चीज पर निश्चय करके बैठ जाय तो उसको कुछ समय के लिये शान्ति मिल जाये । यह अस्थायी शान्ति साकार भक्ति वालों को भी मिलती है, निराकार भक्ति वालों को भी मिलती है, प्रकाश को देखने वालों को भी मिलती है और शब्द के सुनने वालों को भी मिलती है । मगर जो आदमी जाँच करता रहता है, बुद्धि द्वारा प्रयत्न करता रहता है उसको कहीं भी शान्ति नहीं मिलती । वह कुछ समय के लिये आनन्द लेता है । उसके बाद फिर उसकी खोज जारी रहती है । यह मेरा अपनी जिन्दगी का अनुभव है । सम्भव है मेरी जिन्दगी का अनुभव गलत हो । मैं इसलिये नहीं कहता कि कबीर जैसे सन्त जिन्होंने यह शब्द लिखा, उन्होंने भी तो कह दिया कि वह जो हमारा असली मालिक है वह तो नाद में भी नहीं होता । वहाँ तो शब्द भी नहीं होता । इसके प्रमाण में कबीर का शब्द सुनाये देता हूँ । यह भी कबीर का शब्द है और वह जो आप लोगों को सुनाऊँगा वह भी कबीर का ही शब्द है । यह प्रमाण है कि मैं जो कुछ कहता हूँ वह मेरे अन्तःकरण के अनुसार ठीक है । लोगों के लिये नहीं । मैं अपनी ही संतुष्टि के लिये कहता हूँ । कबीर का शब्द है :—

कहूँ उस देश की बतियां, जहाँ नहीं होत दिन रतियां ।
नहिं रवि चन्द्र और तारा नहिं उजियार अंधियारा ॥

यह जो कुछ मैंने कहा कि वह मालिक प्रकाश से भी आगे है वही कबीर ने कहा । केवल शब्दों का अन्तर है ।

नहिं तहाँ पवन और पानी, गये वह देश जिन जानी ।
नहिं तहां धरनि आकाशा, करे कोई संत तहां बासा ।।
वहां गम काल की नाहीं, तहां नहिं धूप और छाईं ।

माया देश, काल देश, दयाल देश ऐसे-ऐसे शब्द सन्तों ने गढ़े हुए हैं। फिर काल क्या है ? जहाँ गति है वहाँ काल है। गति होती है तभी शब्द होता है जब गति होती है तभी प्रकाश होता है। नीचे आकर गति होती है तो मन संकल्प करता है, विचार करता है। नीचे आकर शरीर में गति होती है तो शरीर गति करता है। तो काल क्या हुआ ? जहां गति है वहाँ काल है।

न जोगी जोग से ध्यावे, न तपसी देह जरवावै ।
सहज में ध्यान से पावे, सुरत का खेल जिहि आवै ।।
सोहंगम नाद नहिं भाई, न बाजे शंख शहनाई ।

पहले शब्द में तो कबीर ने यह कहा कि अपने घट में देखो कि यह आवाज कैसी है ? और दूसरे शब्द में कहते हैं कि वहां सोहंगम नाद भी नहीं है न शंख और शहनाई वहां बजती हैं।

निः अच्छर जाप तहां जापै । उठत धुन सुन्न से आपै ।
मंदिर में दीप बहु बारी । नयन बिन भई अंधियारी ।।

कबीर का क्या भाव है यह वह जानते होंगे। मैंने इसी वास्ते उस ढंग से नहीं कहा जो लोगों को भ्रम में डाले या शंकायें पैदा होती रहें। कबीर की बाणियों में या स्वामी जी की बाणियों में क्या है ? इन्सान के मन में इस प्रकार की बाणियाँ सुनकर सवाल और जबाब उठते रहते हैं। मेरे शब्दों में सवाल जबाब उठने की कोई आवश्यकता नहीं।

कबीरा देश है न्यारा । लखे कोई नाम का प्यारा ।।

कबीर ने कह दिया कि वह देश न्यारा है और कोई नाम का प्यारा उसको देखेगा। नाम क्या है ? आदि शब्द। तो कबीर कहता है उसको मैंने लखा है, देखा है, जाना है ? मैंने भी उस आवाज को देखा है कि कैसी आवाज है। वह जो मेरी (अस्तित्व) हस्ती है, उसकी आदि गति का नाम

"नाम" है। तो मेरा देश क्या हुआ ? जहाँ आवाज नहीं है, जहां शब्द नहीं है, जहां मन नहीं है, जहां शारीरिक भान नहीं हैं। उस देश का नाम सन्तों ने शायद अनामी धाम रक्खा हो। गुरू नानक ने शायद अकाल पुरुष कहा हो। उस देश के विषय में जहां मेरे अन्तर से न तो शब्द प्रकट होता है और न प्रकाश होता है, न मन होता है, न शरीर के भान रहते हैं, मुझे पता नहीं लगता था। उस देश को मैं लख नहीं सकता, देख नहीं सकता, वह अनर्वचनीय है अतः वह अकह है, अपार है, अगाध है और अनामी है। वह देश जिसको मैंने लखा है, देखा है और इस गुरू पूर्णिमा पर उस देश का हवाला देते हुए मैंने अपने कर्म भोग वश यह कहने की कोशिश की है कि ऐ इन्सान ! तेरा आदि तो है 'वह' जहाँ से तू इस शरीर में आया। और जब तुम इस दुनियां में रहते हो तो तुमको क्या चाहिये ? शान्ती और सुख। तुम्हारी जिन्दगी में और जिस अवस्था में तुमको शान्ती मिलती है अर्थात् साकार की भक्ति से तुमको शान्ति मिलती है तो साकार की भक्ति किया करो। अगर निराकार की भक्ति से शान्ति मिलती है तो निराकार की भक्ति किया करो। प्रकाश को देखने से मिलती है तो प्रकाश को देखो, शब्द को सुनने से मिलती है तो शब्द को सुनो, और अगर तू अधिक ही जानने वाला है खोज करने वाला है तो फिर उस देश का ध्यान कर जो अकह अपार अगाध और अनामी है। अभिप्राय तो तुम्हारे अन्तर जो जिज्ञासा है, जो खोज है, उसको सन्तुष्टि देना है। जिसको जहाँ से सन्तुष्टि मिल जाये उसके लिये वही मार्ग जिन्दगी गुजारने के लिए ठीक है। यह है मेरा गुरू पूर्णिमा का सारा सन्देश।

गुरु नाम है ज्ञान का, समझ का और विवेक का। जिस समझ से जिस विवेक से, जिस रहनी से तुमको शान्ती मिलती है तुम उसको ग्रहण करो।

अगर यह बात आम पब्लिक की समझ में आ जाये तो हमारे जितने मजहबी भेदभाव हैं मजहबी द्वेष हैं, यह बहुत कुछ दूर हो जांय। साकार वाले अच्छे हैं, निराकार वाले अच्छे हैं, प्रकाश वाले अच्छे हैं, शब्द वाले

अच्छे हैं। तुम अपने शब्दों की टेक में आकर स्वयं तो अमल नहीं करते मगर किसी पन्थ के, किसी मजहब के या किसी प्रकार की भक्ति के टेकी होकर दूसरों से गैरियत रखते हो। इसलिये मैंने इस गुरू पूर्णिमा पर यही भाव "साधो ! सहज समाधि भली।" के सिलसिले में बयान किया है कि जिसको जहां शान्ति मिलती है, जिस बात से उसको शान्ती मिलती है, जिस साधन से उसको शान्ती मिलती है चाहे मुसलमान हो, हिन्दू हो, चाहे संतमत के हो, चाहे किसी सम्प्रदाय के मानने वाले हो, वहाँ से प्राप्त करो। रह गया यह ख्याल कि मरने के बाद क्या होता है, कुदरत तौफीक दे कि मैं मरने के बाद बता सकूँ।

उसका अन्त तो किसी ने पाया नहीं। वह तो अकह, अपार और अनामी है। उसमें गति होती है। उससे शब्द प्रकाश और रचना होती है। उसका पता न कबीर को लगा न राधास्वामी दयाल को, न महर्षि जी को न गुरु नानक को। सबने अपने अहंभाव में आकर जिस रास्ते पर वह चले थे, उसको सबसे ऊँचा बताकर, दूसरों का खंडन कर दिया। इस गलत खंडन ने भारतवासियों को बाँट दिया। यह बाँटने वाली बात थी अनसमझी। गुरु का काम है समझ देना। इस कलियुग में मजहबों के कारण हम लोगों में गैरियत आ चुकी है। कोई कहता है संत अच्छे हैं, कोई कहता है ब्रह्मवादी अच्छे हैं, किसी के विचार में कर्मकाण्डी अच्छे हैं, कोई ध्यानी या योगियों को अच्छा बताता है। मैं कहता हूँ सब अच्छे है। जहाँ जिसको शान्ति मिलती है उसको वही मार्ग अच्छा है। यह मेरा भाव है जो मैंने गुरू पूर्णिमा पर वर्णन किया। यह भाव कब आयेगा ? जब विवेक आयेगा और समझ आयेगी। यह समझ और यह विवेक इन्सान को उसके अपने जीवन के अनुभव से प्राप्त होता है मगर हम लोग अज्ञान से अपने जीवन के आधार पर टेकी हो जाते हैं और अपने ख्याल को अच्छा समझकर दूसरों का खंडन कर देते हैं।

अब पिछला समय गया, अब खंडन की कोई जगह नहीं रही। यह तो मज़हबी खंडन है जो मैंने बताया। अब तुम देखो कि हर एक पार्टी

हर एक मण्डल अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार दुनियां की उन्नति और तरक्की के लिए जो कुछ तजबीज करता है या सोचता है तो वह अपनी बुद्धि को अच्छा समझता है और दूसरों की बुद्धि को तुच्छ समझता है। इसका नतीजा पोलीटीकल झगड़ा है, घरों के झगड़े हैं, समाज के झगड़े हैं। आप शादी विवाह को ही ले लीजिये। एक आदमी कहता है ग्रन्थ साहब से फेरे लेलो। दूसरा कहता है कि आर्य समाज की रीति से करो। तीसरा कहता है कि सनातन की रीति से करो। चौथा कहता है कि किसी और तरीके से करो। तो यह सब कुछ बुद्धि के निर्मल न होने का कारण है और यही हमारी सामाजिक अशान्ति और मजहबी और पोलीटिकल अशान्ति का कारण है।

इस ख्याल को दृष्टि में रखकर मैं यह काम करता हूँ। काम मैंने किसी के लिए नहीं किया। इन्सान संस्कारों से प्रभावित हुआ बेबस है। एक लड़का ब्राह्मण के घर में या हिन्दुओं के घर में पैदा होता है तो उसको ब्राह्मण पने या हिन्दूपने के संस्कार मिलते हैं। अब उसके लिए इन संस्कारों को छोड़ना बहुत कठिन है। तो मौज मुझे उस मालिक की तलाश के सिलसिले में जैसा कि मैं कहता रहता हूँ मेरे कर्म हैं या अकाल पुरुष की इच्छा, दातादयाल के चरणों में लेगई। उन्होंने मुझको संभाला, प्रेम किया, हौसला दिया, मेरी अनसमझी की दशा में जब मुझको समझ नहीं थी। जिस तरह माँ बाप अपने छोटे बच्चों की गलतियों को दर गुजर करते हुये उनसे प्रेम करते हैं और वह जो बात कहते हैं होती तो बिल्कुल बेशऊरी की और अनसमझी की है मगर माँ बाप खुश होते हैं। तुमने कभी सुना होगा कि कोई छोटा बच्चा होता है और कोई बड़ी उम्र की चाची ताई बैठी होती है। बच्चा बेवकूफ होता है। वह कहता है कि मैंने ऐसी औरत लेनी है बच्चे कह देते हैं कि नहीं? उनको समझ तो होती नहीं मगर उनकी बातों को सुनकर माँ बाप हँसते है। ऐसे ही मेरी अज्ञानता को दातादयाल ने नजर अन्दाज करके मेरे साथ भी बच्चे जैसा व्यवहार किया। मुझे उनकी याद आती है। आज मैं महसूस करता हूँ कि जो कुछ भी दातादयाल के साथ

मैंने नाच नाचा वह सारे का सारा उस बच्चे जैसा था।

मैं जिज्ञासू था और हमेशा दातादयाल से अपने साधन और अपने अनुभव के आधार पर जो कि मुझे नजर आते थे, सवाल किया करता था। चूंकि पिछले समय में सन्तों ने और हर एक मजहब वालों ने बात को परदे में रक्खा था इसलिये दातादयाल शायद यह समझते होंगे कि फकीर-चन्द सच्चाई का खोजी है, इसको खेल खेलने का अवसर दिया जाय। उन्होंने सन् १९३३ ई० में सुनाम स्टेशन पर आम सत्संग में कहा था कि "फकीर ! जमाना बदल जावेगा, मजहब मिल्लत समाप्त हो जायेंगे। मेरी वर्णन शैली को भी लोग पसन्द नहीं करेंगे। चोला छोड़ने से पहले तालीम को बदल जाना। इसलिये इन संस्कारों के आधीन मैंने अपने जीवन में जो अनुभव किया, वही कहा। हो सकता है कि दुनियां के ख्याल में मेरा अनुभव गलत हो मगर मेरे ख्याल में यह गलत नहीं। मैं अपनी आत्मा को गलत नहीं कहता। मैंने देख लिया, समझ लिया कि वह एक तत्व है। उसमें हिलोर होती हैं, रचना होती हैं और उसी में समा जाती हैं। साधन से योग से और जप से मुझे यह सिद्ध हुआ कि यह सब मेरे भ्रम थे। लोग जब यह सुनेंगे कि यह साधन योग और जप तप जो कुछ भी मैंने किया यह भ्रम था अज्ञान था तो मुझे पागल ही कहेंगे, क्योंकि दुनियां को इन चीजों की टेक है। मैंने यह कर करके देखे हैं और मुझे यह सिद्ध होगया कि यह कुछ नहीं था, केवल मेरे मन का ही खेल था। आज कबीर का शब्द निकला :—

अरे ! कोई समझो रे नर ज्ञान, गगन में आवाज कैसी है।
बिन धरती एक मन्दिर देखा, बिना सरोवर पानी।
बिन दीपक इक चमक चाँदनी, जोत में जोत समानी॥
जग में आया पढ़ा लिखाया, तेरी सुरता नहीं मिटानी।
ईडा पिंगला सुषमना नाड़ी, तिरकुटी बाँध निशानी॥

वह कहते हैं कि जगत में आया, पढ़ा लिखा मगर शान्ति नहीं मिली। शान्ति को प्राप्त करने के लिये सन्तों ने ने क्या तरीका बताया ? अपने

अन्तर चलो, उस आवाज को पकड़ो। जब उस आवाज को पकड़ लोगे तब तुमको ज्ञान होगा, जो मुझको हुआ। मैं उस आवाज को पकड़ता था, मगर यह ज्ञान नहीं था कि जो रूप मेरे अन्तर प्रकट होते हैं यह मेरे अपने मन के बनाये हुए हैं। मैं उनमें फंसा रहता था और उनको सत्य मानता था इसलिये गुरू पूर्णिमा पर मैंने, दातादयाल तो थे नहीं सतसंगियों की ही आरती की है कि आप लोगों की दया से मुझको यह भेद मिल गया।

गगन मण्डल बिच अमृत कुँआ, जहाँ ब्रह्म का बासा।
सगुरा होवे सो भर भर पीवे, निगुरा मरे पियासा॥

अब अगर कोई ब्रह्म को वह अवस्था कहता है जो मैंने बयान की तब तो ठीक है! यह शब्दों का ही जाल है। शब्दों के ही पीछे फिरते हैं। हिन्दुओं में तुम देखो, वैष्णवों ने विष्णु को सबसे ऊँचा रक्खा, शैवों ने शिव को सबसे ऊँचा रक्खा, देवी के उपासक देवी को सबसे ऊँचा कहते हैं और गुरु मत वाले गुरू को सबसे ऊँचा कहते हैं। यह सब शब्दों का फेर है और कुछ नहीं। शब्दों के फेर से निकालने के लिये सत्संग हैं। मैंने अपनी जिन्दगी में ३३ साल या ३४ साल परमार्थ का काम किया है। इसमें मैंने क्या किया? शब्दों के फेर में दुनियां आई हुई है। दुनियां नहीं मैं स्वयं इस फेर में आया हुआ था। शब्दों के उस फेर से मैं निकल गया। काम तो मैंने अपने लिये किया मगर शायद इससे किसी का भला हो जावे:-

गगन महल दो पक्षी बैठे, एक गुरू एक चेला।
चेला रहा सो चुन-चुन खाया, गुरू निरन्तर खेला॥

चेला कौन है? और गुरू कौन है? चेला तुम्हारी वह शक्ति है जो सवाल उठाती है और गुरु नाम है उस जबाब का, उस ख्याल का, उस अनुभव का, जिससे तुम्हारा सवाल हल होता है। चेला जो है सवाल करने वाला यह तो समाप्त जायेगा क्योंकि जो सवाल तुम्हारे अन्तर पैदा होगा, जब उसका जबाब मिल जावेगा, तो चेला जो है वह समाप्त हो जायगा। फिर गुरु क्या हुआ? किसी सवाल का जबाब मिलने के बाद तुमको क्या मिलता है? शान्ति मिलती है तो फिर गुरु का नाम क्या हुआ?

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

शान्ति। तो यह कब मिलते हैं? जब तुम्हारे अन्तर की वासनायें या जो सवालात उठते हैं यह सब समाप्त हो जांय। यह है इसका भाव जो मैं समझता हूँ।

गगन मण्डल दो पक्षी बैठे, एक गुरु एक चेला।
चेला रहा सो चुन चुन खाया, गुरु निरन्तर खेला॥

यह मुझे पता नहीं कि लोगों के अन्तर बाकी क्या रह गया? मगर मेरे अन्तर जो बाकी रहा वह है शान्ति, बेफिकरी और इसी का नाम गुरु है। फकीरचन्द का नाम गुरु नहीं है। महर्षि जी का नाम गुरु नहीं है। गुरु नानक साहब का नाम गुरु नहीं है। चूंकि इन्सान के मन के अन्तर तरह-तरह के प्रश्न उठते हैं और उन महापुरुषों के बचनों से वह प्रश्न समाप्त हो जाते हैं और इन्सान को शान्ति मिलती है इस वास्ते कह देते हैं कि शान्ति देने वाला बाहर का गुरु है। इस ख्याल से दातादयाल भी गुरु थे। गुरु नानक भी गुरु थे स्वामी जी भी गुरु थे, कबीर भी गुरु थे। और वेदों पुराणों और उपनिषदों के लिखने वाले भी गुरु थे। मैंने वह काम किया है जिससे मानव एकता, धार्मिक एकता, सामाजिक एकता और पोलीटिकल एकता हो। अपनी जिन्दगी में मैंने इसी ध्येय से काम किया है। और यही मेरा मिशन था। क्यों? मैं आया ही इसीलिये हूँ। कुदरत ने मेरे दिमाग को बनाया ही इसीलिये है :—

गगन मण्डल बिच गऊ बियानी, धरती दूध जमानी।
माखन माखन सन्तों खाया, छाछ जगत बरतानी॥

वह जो हमारी आदि गति है उसके कारण यह सारा संसार बना। संकल्प बने। हमारा शरीर बना। तो वह कहते हैं कि गगन मण्डल में गऊ बियानी यानी गऊ सोई। वह जो उसका दूध था वह जमीन बन गया। हमारा शरीर बन गया, हमारी दुनियां बन गई, हमारा ख्याल बन गया। हमारे ख्याल का ही यह कुल नतीजा है। तो जो सन्त थे उन्होंने इसका सार भेद, तत्व, अर्थात् शान्ति थी, वह प्राप्त करली और जो थोड़ी बहुत शान्ति थी वह छाछ! छाछ भी तो शान्ति देती है, वह बाकी छाछ दुनियां को

मिल गई ।

किसी को मूर्ति पूजा से, किसी को निराकार की भक्ति से, किसी को वेद से । वह कहते हैं शान्ति तो उनको भी मिली । अन्तर केवल इतना था कि जो मक्खन और छाछ की शक्ति में होता है ।

कहें कबीर सुनो भई साधो, यह पद है अलबेला ।
जो कोई इसका अर्थ लगावे, वही गुरु हम चेला ॥

कैसे गुरु और चेला ? जिसने जिन्दगी के तमाम मरहलों को तै करके शान्ति प्राप्त करली वही गुरु है । मैं तो कबीर का गुरु नहीं बनता, मगर यह वर्णन शैली है । तो इष्ट पद क्या है ? शान्ति । यही राधास्वामी मत के चलाने वाले राय सालिगराम साहब अपनी बाणी में गुरु की स्तुति करते हैं:-

"परम गुरु राधास्वामी रे । वही मेरे जीवन के अधारे ॥"

वह लिखते हैं कि मुझको जीवन में सब अनुभव करा दिया, विकार भी पैदा हुए, नाश भी कर दिये । अन्त में स्वामी जी ने उनको क्या दिया ?

'घात माया ने की बहु भाँति । निरख दे बख्शी मोहे शान्ति ॥

निरख दे यानी समझ देकर के मुझको शान्ति दी । यही सनातन धर्म कहता है । सनातन धर्म वाले जितना कर्म काण्ड करते हैं, उसके बाद शान्ति पाठ करते हैं । करते हैं कि नहीं करते ? हर एक किताब के लिखने वाला नीचे लिखता है ओ३म् शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!! :—

परम गुरु राधास्वामी दाता रे । वही मेरे जीवन के अधारे ॥
गाऊँ मैं कस उन महिमा भारी । करी मोपै दया अति न्यारी ॥

असली गुरु स्वामी जी नहीं थे लेकिन उनके कारण हुजूर महाराज को गुरु की प्राप्ति हुई । अगर स्वामी जी महाराज स्वामी शिव दयालसिंह जी उनके प्राणों के आधार होते तो जब स्वामी जी का चोला छूटा तो हुजूर महाराज का भी चोला छूट जाता । दुनियां ने बात को समझा नहीं । असली गुरु जीवन का आधार शब्द है ।

सुरत मन चरनन खेंच लगाये । लिया मोय कि कृपाकर अपनाये ॥
धरी मेरे हिय में दृढ़ परतीत । दई चरनों में गहरी प्रीति ॥

शब्द की गति मति अगम अपार । सिखाई घट में किरपा धार ॥

बाहर के गुरु ने कृपा करके मुझे अन्तर की गति दिखाई । अन्तर का भेद बताया ।

"दिखाकर मन में सभी विकार । दया कर लीने सभी निकार ॥

हमारे अन्तर में तरह-तरह के विकार होते हैं । हम सत्संग में जाते हैं वहाँ से हमको समझ मिलती है । तो वह सभी विकार और बुराइयाँ जो हैं यह सभी निकल जाते हैं :—

"जगत के भोग सभी दिखलाये । भाव उन चित से दिया हटाये ॥

यह हुज़ूर महाराज का अपना भाव है । वह पोस्ट मास्टर जनरल थे । जिस समय वह पोस्ट मास्टर जनरल थे उस समय कोई भी हिन्दुस्तानी इस पोजीशन में नहीं था । तो दुनिया के जितने भोग थे, सब ही हुज़ूर महाराज को मिले । बड़ा आलीशान महल था, बग्घियाँ चढ़ने को थीं, इज्जत बड़ी थी, मान बड़ा था । तो हुज़ूर महाराज कहते हैं कि उन्होंने मुझे सब कुछ दिया ।

पकड़ मेरी ढीली कर तन मन । कराये गुरु चरनन अर्पन ॥

दया मोपर अन्तर अस कीनी । परख मोहै वहाँ की वहां दीनी ॥

देखो क्या कहते हैं ? अन्तर में जो शब्द प्रकट हुआ, नूर प्रकट हुआ, देवी देवता प्रकट हुए । यह दया ही थी न ? उसकी परख देदी कि यह क्या हैं ! मुझे समझ आ गई कि यह रूप क्या थे ? इस तरह से ही मेरी समझ में आ गया । मुझ पर भी तो वैसी ही दया दातादयाल ने की । मैं तो मन के रूपों में फँसा हुआ था, आनन्द लेता था । रूप प्रकट होता था तो मैं खुशी लेता था । बाहर आर्तियाँ किया करता था । तो वह कहते हैं कि मुझको परख देदी, ज्ञान दे दिया कि यह असल में है क्या ?

घात माया ने किये बहु भाँति । निरख दे बख्शी मोहै शान्ति ॥

वह कहते हैं माया ने घात किये । माया कहते हैं बुद्धि को । मेरी बेसमझी ने मेरे साथ बहुत खेल खिलाया । मगर दातादयाल ने मुझे निरख देदी, समझ देदी । मुझे चूँकि समझ नहीं आती थी, तो इसलिये

दातादयाल ने मुझे यह निरख और समझ देने के लिये ही गुरु पदवी दी। मेरे जुम्मे ड्यूटी थी निबल अबल अज्ञानी जीवों की सहायता करने, जगत कल्याण के लिये काम करने और जीवों को भवसागर से पार करने की। वह जो मुझे संस्कार मिला हुआ था, उस संस्कार ने मुझ से यह सारा काम कराया।

तो इष्ट पद है शान्ति। यह तो उन्होंने अपने मान और इज्जत के चक्कर में आकर अलग-अलग मजहब चला दिये। मजहब तो रहेगा मगर उस असलियत की तालीम और असलियत की समझ से मजहबों का पक्ष-पात समाप्त हो जावेगा। मजहब तो कुदरती मजहब है। मजहब के बगैर तो इन्सान रह नहीं सकता। केवल स्वतन्त्र विचार वाले हो जाओ।

ज्यों ज्यों बुद्धि विकसित होती जायेगी इन्सान स्वयं बदलता जायगा। यह है मेरा अभिप्राय:। आज मैं बहुत कुछ कह चला।

—फकीर

* चेतावनी *

जो सोवत है सो खोवत है ।।
टुक नींद से अखियां खोल जरा,
और अपने ईश से ध्यान लगा।
यह प्रीति करन की रीति नहीं,
प्रभु जागत है तू सोवत है ।।
जो कल करना हैं आज करले,
जो आज करना है अब करले।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया,
फिर पछताये क्या होवत है ।।
नादान भुगत करनी अपनी,
ए पापी पाप में चैन कहाँ।
जब पाप की की गठरी शीश धरी,
फिर शीश पकड़ कर क्या रोवत है ।।

सतसंग

परम सन्त, परम दयाल फकीरचन्द जी महाराज

शिव समाधि, राधास्वामी धाम,

(१३ फरवरी १९७२ महाशिवरात्रि के अवसर पर)

यह शब्द गाया गया:—

हिलमिल मंगल गाओ मोरी सजनी, भई प्रभात बीत गई रजनी ।
नाचे कूदे क्या होय बहिना, सतगुरु शब्द समझ ले सैना ।
स्वांसा तारी सुरत संग लावे, तब हंसा अपना घर पावे ।
अधर निरन्तर फूली फुलवारी, मनसा मार करो रखवाली ।
अमी सींच अमृत फल लागा, पावेगा कोई सन्त सुभागा ।
कहे कबीर गूंगे की सैना, अमी महारस चाखे नैना ।

राधास्वामी,

१९०५ में किसी चीज की तलाश में २४ घण्टे रोने के बाद, एक दृष्य था सुबह साढे चार बजे का जिसमें मुझे दाता दयाल, महर्षि शिवब्रतलालजी महाराज का सा रूप जिनकी समाधि पर मैं बैठा हुआ हूँ, नजर आया था और मैं उनके चरणों में गया था। मैं राम, ईश्वर, परमेश्वर, परमात्मा को मानने वाला था। दाता दयाल ने कबीर मत, सन्त मत, नानक मत की तालीम मुझे दी, जिसकी मुझे समझ नहीं आती थी। जिन्दगी चरणों में गुजर गयी । उस वक्त मैं ने प्रण किया था कि जो कुछ मेरा अनुभव होगा, बता जाऊंगा। तो एक मेरा कर्म, दूसरे मेरे ग्रह ऐसे हैं, तीसरे दाता दयाल का हुक्म ।

मैं ने यह काम किया। मालूम नहीं, मैं ने जो कुछ काम जिन्दगी में कियाहै, गलत किया है या ठीक किया है। नीयत मेरी साफ रही।

कबीर साहब के आज के शब्द में है—

हिलमिल मंगल गाओ मोरी सजनी, भई प्रभात बीत गई रजनी।

तजुरबे ने साबित किया है कि जब तक मैं ईश्वर को याद करता था, उनके प्रेम में रोया करता था, मगर मेरे दिल में दुनियां का द्वेष था। किसी को बुरा समझता, किसी को अच्छा समझना। किसी धर्म को अच्छा समझता किसी को खराब समझता। आत्मा में घर वालों से या दूसरों को दुश्मन या मुखालिफ समझकर घृणा रखता तो उस वक्त मैं ईश्वर की प्रार्थना किया करता था और प्रार्थना में रोकर बेहोश भी हो जाया करता था। मगर मेरे मन में शान्ति नहीं थी। तुम लोग भी देखते होंगे कि दाता की याद में, या अपने अपने गुरु की याद में, या राम की याद में मन्दिर में जाकर प्रार्थना करते हो। मगर जब घरमें आते हो फिर वही हालत हो जाती है। मनके अन्तर दुविधा आ जाती है। द्वेष आजाता है। नफरत आजाती है, तो उनसे तुमको खुशी नहीं मिलती। तो यह मेरा तजुर्बा था।

दाता दयाल की तालीम ने मेरे ख्याल को बदला : उन्होंने कहा प्रेम का मार्ग अख्तियार करो। एक तो शान्ति वह है जो हमारे मिलने जुलने वाले, घर वाले या मेलजोल वाले देते हैं जब तक कोई इनके साथ प्रेम और मुहब्बत का बर्ताव नही करता, मिलजुल कर नहीं रहता, तबतक वह लाख प्रेम की भक्ति करने वाला हो, उसको शान्ति नहीं मिल सकती। यह अमली पहूल है। करके देख लो। कितने ही आदमी हैं, मन्दिरों में घन्टे, दो-दो घन्टे साधना करते हैं प्रार्थना करते हैं, मगर उनका अपने दिल के अन्तर अपने सम्बन्धियों से अपने घरों में ईर्ष्या है, द्वेष है, उनको शान्ति कहां!

एक तो यह गृहस्थ का जीवन, एक अपना मन। कहीं काम तृप्ती है, कही क्रोध तृप्ती है, कहीं लोभ, कहीं मोह तृप्ती है। अनेक प्रकार की चिन्ताएं हैं। अगर इन तमाम चिन्ताओं के होने पर समता

नहीं है, प्रेम नहीं है, भक्ति नहीं है, मेल नहीं है, तो भी इन्सान को शान्ति नहीं मिल सकती। यह अमली जीवन का सबक है लाख तुम बाबे फकीर के गुण गाते रहो, दाता दयाल के गुण गाते रहो, राम के गुण गाते रहो। जब तक तुम्हारा मिलजुल कर सज्जनों से हिलमिल कर रहने का स्वभाव नहीं है, तुम शान्ति हासिल नहीं कर सकते। सोचने वाले अपने दिमाग में सोचें कि मैं ने ठीक कहा या गलत। तुम हर वक्त चिन्ता-ग्रस्त रहते हो, फिक्र में रहते हो, गम में रहते हो, दुविधा में रहते हो, जोश में आजाते हो तो इस वास्ते मेरी समझ में जो कुछ सन्तों का मार्ग आया है वह बताता हूँ। कबीर साहब का शब्द है, वह कहते हैं

हिलमिल मंगल गाओ मोरी सजनी, भई प्रभात बीत गई रजनी।

आई राज गुजर गई। अज्ञान का जो तरीका था, बेसमझी का जो जमाना था, वह तुम्हारा चला गया। अब सुबह हो गयी। नया दौर दुनियां में आया। नई जिन्दगी तुमको मिली। तो क्या करो? मिलजुल के रहो। जिसके घर में शान्ति नहीं है, जिसको अपने परि-वार के साथ नहीं बनती, घरेलू जिन्दगी में, मुल्की जिन्दगी में जिसकी दूसरों से नहीं बनती, द्वेष घृणा है, मुल्की शान्ति नहीं है, घरेलू जिन्दगी में घरेलू शान्ति नहीं है, मनकी वृतियां अगर एकाग्र नहीं होती, उनमें आपस में समता नहीं है, मिल जुल के रहना नहीं है, तोभी शान्ति नहीं। तो असली शन्ति को हासिल करने के लिये क्या तरीका है।

नाचे कूदे क्या होय बहिना, सतगुरु शब्द समझ ले सैना।

वह कहते हैं, सतगुरु के शब्द को लो। सतगुरु शब्द क्या है? जो वह बचन कहता है, जो वह तुमको हिदायत करता है, जो वह शिक्षा देता है, उसके उपदेश को ग्रहण करो। केवल गुरु गुरु करने से किसी का कल्याण नहीं होगा। लोग लाखों गुरुमत में शामिल है। इस वक्त, राधास्वामियों, जै गुरु देवों, नानक पन्थियों, निरंकारियों

अर्थात् किसी भी घर में देखो। शान्ति है? इकट्ठे हो गये, चार लेक्चर दे लिये मेरी तरह या बातें बनादी मधुकर की तरह, या मेरी तरह। लेकिन समता नहीं है। बाहर की समता तो तुममें तब आयेगी जब पहले तुम्हारे अपने मन के अन्तर समता आयेगी। जब तक तुम्हारे अपने मन के ऊपर काबू नहीं है, तुम अगर यह चाहो कि घरों में शान्ति रखो, तुम शान्ति रख ही नहीं सकते। क्योंकि छोटा दायरा तुम्हारा ही बना हुआ है। वह छोटा दायरा है अपने मन, बुद्धि, चित्, अहंकार को समता में रखना। उसके लिये यह सुमिरन, ध्यान, भजन है। जो तो व्यक्ति गुरु के हुक्म के मातहत अपने मन की वृतियों को इकट्ठा करता है उसके मन को शान्ति मिलती है।

कल मेरे पास कई आदमी आये हैं जो कहते हैं, "बाबाजी, शान्ति नहीं है।" शान्ति बाबे को नहीं देनी। शान्ति किसी बाहर की ताकत को नहीं देनी। शान्ति तुमको अपने मन की वृतियों को इकट्ठा करके समता में, एकता में, प्रेम से रहने में मिलेगी, न कि किसी गुरु द्वारा फूँक मारके तुमको शान्ति देनी है। यह तुम्हारा भूल और भ्रम है अगर ऐसा सोचते हो। उस वास्ते कबीर कहता है:—

'नाचे-कूदे क्या होय बहिना, सतगुरु बचन समझ ले सैना।'

वह कहते हैं—"सतगुरु के शब्द इशारे में समझो।" पिछले वक्त में जितने सन्त गुजरे हैं दाता दयाल महर्षि शिव, स्वामी जी, कबीर, सबने सैन-बैन किया, इशारा किया। मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने साफ बयानी से काम लिया। स्पष्ट बात किसी को कहदी। किसी को धोके में नहीं रखा, न अपने पीछे लगाया। लाख तुम मेरे नाम की दुहाई देते फिरो, लाख मेरे नाम के झन्डे खड़े करते रहो, तुमको शान्ति नहीं मिलेगी, नहीं मिलेगी, जब तक

तुम अपने मन की वृतियों पर जो तुम्हारे मन के अन्तर संकल्प-विकल्प उठते हैं, काबू नहीं कर लेते। इन पर काबू करने के लिये गुरु ने नाम दिया हुआ है। गुरु पहले नाम देता है सुमिरन, फिर ध्यान फिर देता है शब्द। तीन चीजें हैं। सुमिरन से जब तुम्हारे मन के अन्तर विक्षेप आने लगे, तरह-तरह के ख्यालात उठने लगें, यानी मन की वृतियों में समता न रहे, उस वक्त सुमिरन से मदद लो। एक व्यक्ति एक घण्टे सुबह सुमिरन करता है। सारा दिन उसका मन उसके काबू में नहीं है, जो चाहे सोचता रहता है, किसी के बर-खिलाफ सोचा, किसी की निन्दा की, किसी की बुराई की। कहीं किसी भोग में ग्रस्त होने की इच्छा की। उसने जो एक घण्टे सुमिरन किया, उससे उसे पूरा फायदा नहीं मिल सकता। यह नुक्ता है जो मैं बहैसियत संत सत्गुरु संसार के अशान्त प्राणियों को बताना चाहता हूँ कि तुम में अज्ञान से कोई समझता है कि कोई संत, देवता, गुरुदेव, कोई महर्षि जी, कोई फकीरचन्द या कोई और तुमको शान्ति दे देगा। तुम भूल में हो। तुम्हीं दातादयाल के जितने शिष्य हो। क्या तुम दुःखी नहीं रहते हो? अब भी होते हो। तो अगर दातादयाल के नाम ले लेने से शान्ति मिलती होती: तो तुमको शान्ति मिल जानी चाहिये थी। आज ही एक आदमी ने मुझे कहा कि मुझे शान्ति दे दो। शान्ति क्या मेरे पाकिट में पड़ी है जो मैंने दे देनी है तुमको? मैंने शान्ति के हासिल करने का तुमको जरिया या गुरु बताना है। पिछले जमाने में गुरु इशारों में दिया जाता था। सैन-बैन जिसने इशारों में समझ लिया; समझ लिया। जिसने इशारा नहीं समझा, नहीं समझा। मैं गूंगे का गुड़ नहीं कहता। स्पष्ट बात कहता हूँ क्योंकि मेरे जिम्मे दातादयाल महर्षि जी की जात पाक ने यह काम दिया था।

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेष।
दुखी जीव को अंग लगाकर, लेजा गुरु के देश॥

मेरा अंग क्या है ? अगर तुम मेरे शरीर को मेरा अंग समझते हो, तुम सारे मेरे शरीर को चाट जाओगे । मेरा तो मांस नोंच के खाजाओगे । बाणी जो मुँह से कहता हूँ, इस बाणी को समझ कर अपने मन पर काबू रखने की कोशिश करो । कई जो मेरे पास बाहर से अभी आये हैं सतसंग के ख्याल से, उनको कहता हूँ कि एक गुरु मंत्र है—नाम जो गुरु ने तुमको दे दिया है उसका एक क्षण-आधा क्षण साधन करो मगर सारा दिन का क्या करना है तुमको । तुम्हारा मन जो ऊट पटांग बातें सोचता रहता है, अनुचित बातें सोचता रहता है, जिससे तुम्हारे दिल को कष्ट होता है, कड़वी बाणी से दूसरों को दुःख पहुँचता है, उस पर नजर रखे । सन्तों के मार्ग में इसको निरख-परख कहते हैं । तुम सुमिरन करते हो तो सुमिरन सिर्फ यही नहीं कि आध घण्टा कानों में उँगलियाँ देकर बैठो और सुमिरन राधास्वामी नाम का, या ओ३म् का, या जो तुम्हारे गुरु ने बताया, उसका करो । यदि सारा दिन तुम्हारा मन तुम्हारे काबू में नहीं है जो मर्जी चाहे सोचते हो, ऐसे जीवों को कोई खास फायदा नहीं होता । अलबत्ता इतना हो जाता है कि खून लगाकर शहीदों में दाखिल हो जाते हैं या नामधारी कहला जाते हैं । हम नामधारी हैं । बस एक नाम के सिवा और कुछ नहीं आता ।

तो कबीर का क्या भाव है इस शब्द से, कबीर जानता होगा मुझे नहीं पता । चलते-फिरते उठते बैठते गुरु के बचन का ख्याल रहे कि गुरु ने क्या हुकम दिया हुआ है । जब क्रोध आने लगे, उसको रोकने की कोशिश करो । नाजायज लालच आता है उसे रोकने की कोशिश करो । पर स्त्री को देख कर तुम्हारा मन चंचल होता है, उसको रोकने की कोशिश करो । और फिर मन को हमेशा किसी काम में लगाये रखो । जो शख्श अपना जीवन काम में नहीं लगाता वह मूर्ख है । दाता दयाल के आप शब्द पढ़ते हैं । उन्होंने यही कहा है, काम करो, काम करो, ताकि मन तुम्हारा उन कामों की तरफ लगा रहे और काम में, जो करते हो, सबसे पहले यह

देखो कि उन कामों के करने से तुम्हारा अपना भला होता है। पहले अपना आप, पीछे भाई व बाप। अपने काम के भले होने के साथ यह देखो कि तुम्हारी नीयत उस काम के करने से दूसरों को नुकसान पहुँचाने की तो नहीं हैं। कुछ नुकसान तो पहुँचता ही रहता है। एक विजनिस मैन है। वह बाजार में किसी जगह जाके एक नयी दुकान खोलता है अपने कमाने खाने के लिये। अब जो दूसरी दुकानें हैं, उन पर कुछ न कुछ असर तो उसका पड़ेगा ही क्योंकि उनके ग्राहक कम होंगे और उसके पास आयेंगे मगर उसकी नीयत बुरी नहीं है। वह सिर्फ अपना काम करना चाहता है। उसके दिल में यह ख्याल नहीं कि साथ वाला दुकानदार जो पड़ौसी है, बर्बाद हो जाय। कोई ऐसा नहीं जिससे किसी को फायदा हो और किसी को कुछ नुकसान न पहुँचे। सारा सवाल जो है वह नीयत का है। मैंने अपनी नीयत को साफ रखने की कोशिश की है अपने व्यवहार में और अपने परमार्थ में यद्यपि में गिरता रहा हूं। अब भी गिरता रहता हूं मगर मैं सम्भलता रहता हूँ। इसलिये ऐ सत्संगियों जो इस ख्याल से मेरे पास आये हो कि तुमको शान्ति मिल जाये मैं शान्ति दे दूँ, तो मैं ऐसा पाखंडी गुरु बनना नहीं चाहता। तुमको बता दिया कि नाम लेलो जहाँ से तुम्हारा जी चाहे। गुरुदेवा से ले लो, जहां मर्जी हो जाओ, मैं इन झगड़ों में नहीं पड़ता। क्यों ? इसलिए नहीं पड़ता कि मैं अगर राधास्वामी मत का पक्ष करता हूँ, अपनी ही गद्दी को या अपने ही दायरे को सबसे अच्छा समझता हूं और दूसरे की निन्दा करता हूँ, और कहता हूँ कि गुरुदेवा वाले किसी काम के नहीं, व्यास वाले गलती पर हैं, आगरे वाले गल्ती पर हैं, अगर यह ख्याल रखता हूँ तो मैं यह जो कबीर का शब्द है, इसके मुताबिक कहां हुआ ?

हिलमिल मंगल गाओ मोरी सजनी। भई प्रभात बीत गई रजनी ।।

इस वास्ते मैं हूँ संत सतगुरु वक्त ? संत सतगुरु वक्त कभी कभी प्रगट हुआ करता हूँ, जब तालीम के बदलने की जरूरत होती

है इस वक्त इस गुरु इज्म की गलत समझ ने मानव जाति को अनेक पथों अनेक गद्दियों और अनेक फिरकों में बांट दिया हुआ है। उनका आपस में सहयोग नहीं है। एक दूसरे की निन्दा और बुराई है इस निन्दा और बुराई को दूर करने के लिये स्पष्ट बात कह देने की जरूरत को मैंने महसूस किया। तुम जहाँ से मर्जी आये नाम लेलो। जिससे तुम्हें नाम लेना है, उस गुरु को तुमको पार नहीं करना। अगर वह गुरु है तो तुमको उपदेश देगा। उस उपदेश को समझकर अमल करने से तुम्हारा बेड़ा पार होना है। वह वही है कि सहयोग रखो। मिलजुल के रहो। कोई किसी मजहब का है। कोई किसी गद्दी का है। मतलब तो मन की शान्ति हासिल करने से है। भूख लगी हुई है। कोई मक्के की रोटी सरसों का साग लेकर भूख को दूर करता है। कोई चावल दाल खा के पेट की भूख को दूर करता है। कोई बिस्कुट खा के पेट की भूख को दूर करता है। मतलब तो पेट की भूख को दूर करना है। मतलब तो हमको शान्ति हासिल करने से है। जहां से तुमको शान्ति मिलती है, किसी गुरु से मिलती है, किसी पंथ से मिलती है या किसी राह पर चलने से मिलती है। तुम उस शान्ति को हासिल करो मगर मेरी समझ में यह आया है कि शान्ति किसी को तब तक हासिल नहीं होगी जब तक पहले जो अपने मन की वृतियाँ है, अपने मन के अन्तर जो तरह-तरह की भावनायें वासनायें उठती रहती हैं, उनमें समता नहीं आती। जब तक मिलजुल कर रहने की ताकत नहीं है, तब तक न गुरुदेवा के चेले को शान्ति है, न राधास्वामी मत के चेले को शान्ति है और न मेरे चेले को शान्ति है। शान्ति तो मिलजुल के रहने में है। घर में भी शान्ति मिलजुल के रहने में है। मुल्की शान्ति भी मिलजुल के रहने में है। और अपने आत्मा की शान्ति भी वृतियों के मिलजुल के रहने में है। क्यों प्रेमानन्द। बात ठीक कही मैंने या गलत ? ठीक है न।

यह है तालीम जिसका मैं अलमबरदार हूँ। इसीलिये मैंने इन

मजहबों के की एकता को कायम रहने के लिये दातादयाल की तालीम की यादगार में यहां एक पिलर खड़ा करने की कोशिश की है, जिसकी आज बुनियाद रखी है, और सब लोगों ने करीब एक हजार रुपये इस काम के लिये दिया है। मैंने भी पांच हजार रुपये यहाँ दिया है और आइन्दा और जिन्दगी रही तो देता रहूंगा। क्यों रखा है यह मैंने ? ताकि इस स्तम्भ में ओम भूर्भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम् के जो दरजे हैं सनातन धर्म के और सन्तों के सहमदल कमल, त्रिकुटी सुन्न, महासुन्न, भंवर गुफा, सत् लोक, अलख, अगम, अनामी और मुसलमानों के हूत, हूतुलहूत, हाहूत, आहूत, जबरूत, मलकूत वगैरह, ऐसे-ऐसे जो हैं, इन तमाम को एक करके दाता की तालीम का नमूना पेश कर जाऊँ कि आइन्दा आने वाली जो मानव जाति है, अगर कोई यहाँ आये तो उसको मालुम हो जाये कि दातादयाल महर्षि शिवब्रतलाल वर्मन, एम० ए० एल० एल० डी० की जिनकी यहाँ समाधि है, जिन्होंने कम से कम चार हजार परमार्थ, इतिहास आदि दुनियां के सब विषयों पर पुस्तकें लिखी हैं, उनका यही उद्देश्य था।

हिलमिल मंगल गाओ मोरी सजनी। भई प्रभात बीत गई रजनी ।।

वह किस लिये ? उनकी किताबों को पढ़ो। वह पक्षपात के वरखिलाफ थे। उन्होंने अपनी किताबों में, यद्यपि वह राधास्वामी मत के थे, किसी मजहब का किसी पंथ का खंडन नहीं किया। अवगुण नहीं देखे बल्कि उनके जो गुण थे, उनको उन्होंने अपनी किताबों में बयान किया है। तो इस स्तम्भ का मेरा यह मकसद है कि उनकी तालीम की यादगार रहे। क्यों ? इस वक्त इस तालीम की जरूरत है कि हमारे मजहबी इख्तलाफ दूर हों। सबसे पहले तो यह जरूरत है कि हमारा घरेलू जीवन सुख से गुजर जाये। मैं घरेलू शान्ति पर ज्यादा जोर देता हूँ। तुम्हारे पास करोड़ों रुपये हैं। तुम घर में आते हो। तुम्हारी घर वालों से नहीं बनती।

क्रमशः

❀ मनुष्य बनो के नियम ❀

१—शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिकता के नियमों का वास्त-
विकदृष्टि कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर,
शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और सयम की शिक्षा देना
इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी सरल, सुबोध और
साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक, उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी
स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं
छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और न छापने का अधिकार सम्पादक
को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ
अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिए जवाबी कार्ड अवश्य आना
चाहिये। वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने
यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले वह
अंक निकलने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले वह
अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर
ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेज दी जायगी।

९—नमूना ३५ पैसे के टिकट मिलने पर ही भेजा जा सकेगा।

१०—एक वर्ष से कम के ग्राहक नहीं बनाये जायेंगे। जो किसी भी मास
से बन सकते हैं। ४.५० मूल्य समय पर पेशगी भेजना होगा।

११—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि
मैनेजर के नाम से भेजने चाहियें। मनीआर्डर कूपन पर अपना
पता साफ-साफ लिखना चाहिये और पते की तबदीली भी।

—[illegible] गोविल (विश्व प्रेमी)

Regd. No.

हमारे यहां की पुस्तकें—

	रु० पैसे
१—मनुष्य बनो हिन्दी	६२
२—जागृत जीवन	७५
३—मानव धर्म प्रकाश उर्दू	१—५०
४—सन्त मत सार हिन्दी	१—००
५—फकीर शब्दावली ,,	७५
६—आत्मिक आदर्श ,,	७५
७—सार भेद सचाई ,,	३६
८—आकाशी रचना उर्दू	६०
९—सांई की मौज	६०
१०—शब्द सार हिन्दी	७५
११—अनहद टकार-झंकार	५०
१२—जीवनी दातादयालजी उर्दू ५)	६)
१३—मनोनियम हिन्दी	१—००
१४—सांई की सदा हिन्दी	५०
१५—सांई के सौ ख्याल	५०
१६—सतगुरु-सन्देश	७५
१७—विष्णु संहिता हिन्दी	१—५०
१८—शिव संहिता ,,	१—५०
१९—दयाल संहिता उर्दू	७५
२०—सुमेरु पर्वत	५०
२१—दाता दयाल शब्द संग्रह	६२
२२—योगी हिन्दी	२५
२३—शकुन विद्या हिन्दी	१५
२४—दस अवतार तिरंगा	१५
२५—परमार्थ सुधार हिन्दी	७५
२६—भाग्य को बढ़ाओ हिन्दी	२५
२७—निष्कलंक अवतार	
२८—... उर्दू	५०
२९—विश्व...	१—५०
३०—Key to Freedom Eng.	२)
३१—... कल्याणी, जगत निस्तार	
३२—... उद्धार हिं. उर्दू	२) १।) १।)
३३—यथार्थ शान्ति सन्देश उर्दू	५०
३४—कानूने कर्म हिन्दी	१—००
35—Message of Peace & Prosperity	15
36—Truth & Reality	,, 31
37—Independence Day Messages	,, 75
38—Real Independence	,, 31
39—Letters of Data Dayal	,, 75
40—Light of Anandyog	Rs 3-00

प्रकाशक ... मनुष्य बनो कार्यालय ...

कृपया न मिलने पर निम्न पते पर लौटा दें।

ग्रा० सं० २०२ "मनुष्य बनो कार्यालय", अलीगढ़ उ० प्र० RS.

श्रीमान्